श्रीः ॥

कविवरश्रीत्रिमल्लभट्टविरचितः

वैद्यचन्द्रोदयः ।

(निदानप्रकाशापरनामधेयः ।)



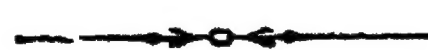
माथुरकुलकमलदिवाकर-

वडेचौबेश्रीकल्याणचन्द्रात्मज-

भिषक्कविश्रीराधाचन्द्रविरचितया

भाषाटीकया विभूषितः

संशोधितश्च ।



स च

मुम्बय्याम्

पाण्डुरङ्ग जावजी इत्यनेन

स्वकीये निर्णयसागरयन्त्रालये मुद्रयित्वा प्रकाशितः ।

द्वितीयावृत्तिः ।

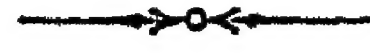
संवत् १९८६, सन १९३०.



Publisher:-Pandurang Jawaji, } Nirnaya-sagar Press,
Printer:-Ramchandra Yesu Shedge, } 26-28, Kolbhat Lane, Bombay.

श्रीः ।

सम्मतिपत्रम् ।



श्रीमत्कल्याणचन्द्रान्वयदिनमणिना राधिकाचन्द्रकेण
भाषाटीका कृतेयं सरलशुभगुणा वैद्यचन्द्रोदयस्य ।
ग्रन्थोऽयं तेन जातोऽनुपमबहुगुणः सम्मतिं ह्येतदर्थे
विप्रोऽहं कृष्णदासः समनिगमपटुः सन्ददामि प्रहर्षात् । १ ।
युग्माङ्गाङ्कब्रह्ममाने ह्यब्दे तपोऽसिते षष्ठ्याम् ।
वाचामारे व्यलिखत्सुशेवधिङ्कार्ष्णिरौदीच्यः । २ ।

खिलचीपुरस्थ-

महाकविश्रीयमुनादासात्मज-
श्रीकृष्णदासस्य ।

राधाचन्द्रो भिषग्वर्यो गीतवाद्यविशारदः ।
वडेचौबे भुवि ख्यातो गुरुर्वन्द्यो हि भूभृताम् । १ ।
भाषाटीका कृता तेन वैद्यचन्द्रोदयस्य वै ।
अत्युत्तमा वैद्यहिता तस्यां वै सम्मतिं ददे । २ ।

खिलचीपुरस्थ-

महाकविश्रीसरयूदासात्मज-
नवनीतप्रियदासस्य ।

वैद्यचन्द्रोदयग्रन्थाः श्रीमत्रैमल्लकल्पितः ।
तस्य टीका कृता योग्या राधाचन्द्रेण धीमता । १ ।
तस्यां हि सम्मतिर्दत्ता श्रीयुतोद्धवशास्त्रिणा ।
फाल्गुनस्य सिते पक्षे चतुर्दश्यां भृगोर्दिने । २ ।

मधुसूदनगढनिवासिउद्धवशर्मणः ।

श्रीः ॥

भूमिका ।

आयुर्वेदके आठ अंगोंमें निदान आदिकारण है । इसके विना वैद्य सर्वथा यशलाभ नही कर सक्ता है । इस अभावके दूर करनेको माधवआदि निदानग्रन्थोंके मतानुसार आयुर्वेदोक्त संपूर्णरोगोंका निदान व्यासी अवलोक और ३२६ स्रग्धराछंदोंमें कविवर श्रीत्रिमल्लभट्टने वैद्यचंद्रोदयनामक अद्वितीय काव्य रचा है । और अंतमें ग्रंथोक्त संपूर्ण रोगोंकी, १४ अनुष्टुभोंमें संख्या कही है । केवल संस्कृत मूल ग्रंथ वडे तपाससे पाया है । परंतु इसपर टीका टिप्पणी कुछभी नही थी । अतएव निघण्टुहृदय माथुरभास्कर वैद्यहृदय तीन पुस्तकोंको मूल संस्कृतमें निर्माण करता और काव्यरसमंजरी विदग्धमुखमण्डन राधाकृष्णगणोद्दीपिका अनंगरंग रतिमंजरी वैद्यवल्लभघेरण्डसंहिता वृत्तरत्नाकर, वृत्तरत्नावली, शंकरीययुग्म श्रीयमुनाष्टक, मथुरामाहात्म्य, श्रीयमुनामाहात्म्य, श्रीयमुनापूजा, श्रीयमुनापंचांग प्रभृति पुस्तकोंके भाषानुवादक चारों संप्रदायके आचार्य और ५२ राजा आदिके मथुरातीर्थपुरोहित वडेचौबे श्रीराधाचंद्रजी वैद्य कविसे इसकी भाषाटीका बनवाई है । यह ग्रन्थ संस्कृत आयुर्वेदीय पाठशालाओंमें विद्यार्थियोंको पढाने योग्य है । और सर्वसाधारणके उपयोगी भाषानुवादसंयुक्त होनेसे होगया है । द्वितीयावृत्ति बहुत शोधन कर दीगई है । यह पुस्तक वैद्य कवियोंके हितार्थ मेनें अपने निजनिर्णयसागर यंत्रालयमें सचिक्कण कागजपर सुंदर सीसकाक्षरोंसे छापदिया है । इसे एकवार मंगाकर आद्योपांत पढकर मेरे व्यय और श्रमको सफल करोगे । और प्रमादसे जो मुद्रणादि दोष रहगये हों उसे विज्ञजन क्षमा करें ।

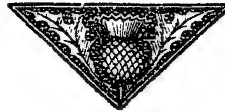
आपका

पांडुरंग जावजी,

निर्णयसागर यंत्रालय, कालिकादेवीरोड,

मुम्बई.

अथानुक्रमणिका।



-

श्रीः ।

वैद्यचन्द्रोदयः ।

भाषानुवादसमेतः ।

अथ मङ्गलावलोकः ॥ १ ॥

श्रीमत्सिन्दूरपूरारुणतनुरतनुद्योतितांशो गणेशो
दानाम्भःपानलोभात्पपतमधुकरश्रेणिमुच्चैर्दधानः ।
दूरीकृत्वान्धकारं दिनमणिरिव यः संस्थितः सिद्धिदाता
निर्विघ्नं विघ्नराजो वितरतु विपुलं सर्वदा मङ्गलं नः ॥ १ ॥

बडेचौबे प्रसिद्धोऽहं राधाचन्द्रो भिषक्कविः ।
कुर्वे सुबोधिनीं टीकां वैद्यचन्द्रोदयस्य वै ॥ १ ॥

सुंदर सिन्दूरकर पूर्ण लाल अंग शोभायमान है अंश जिनके ऐसे गणेश गण्डस्थलके मदजलके पानके लोभसे भ्रमरसमूह जोरसे पड रहेहैं तिन्हे धारण किये अंधकारसमूहको नाश करके ऐसे सिद्धिकों देवेवारें विघ्नराज निर्विघ्नपूर्वक हमको अति मङ्गल दो ॥ १ ॥

आविर्भूता हिमाद्रेरतिनिपुणतया मेनया स्वैः पयोभिः
सिक्ता बालारुणश्रीकरचरणतलद्योतिता स्मेरपुष्पा ।
न्यञ्चद्वक्षोजगुच्छद्युतिरतुलशिवस्तम्भमालम्बमाना
नित्यं वाञ्छानुरूपं मम फलतु फलं पार्वती कापि वल्ली ॥२॥

हिमाचलके अत्यन्त चतुरतासे पैदाभई मेनाने निज दुग्धरूपी जलसे सींची प्रातसूर्यसरीखे अरुण करचरणके तल शोभायमान सुंदर पुष्पवारी मिलेभये स्तनरूपी गुच्छ हे जामे मोटे महादेवरूपी स्तंभसों लिपटी ऐसी पार्वती कोई एक लता मेरेकूं नित्य इच्छानुकूल फलको दो ॥ २ ॥

नानातन्त्रानभिज्ञस्य च भिषज इह स्वल्पबुद्धेः सुखेन
व्याधिज्ञानार्थमुच्चैर्मुनिवचनचयं सार्थकं क्षिप्य सर्वम् ।
अज्ञानध्वान्तधारापृथुदलनकृते वैद्यचन्द्रोदयाख्यम्
ग्रन्थं सत्कीर्तिबीजं सकलसुखकरं निर्मलो निर्मिमीते ॥३॥

मैं त्रिमल्लभट्ट संपूर्ण तन्त्रोंको न जानवेवारे अल्पबुद्धिवारे वैद्यनको सुखसे रोगोंके ज्ञान होनेके लिये बहुभाँति मुनिजनोंके सब सार्थक वचनसमूहको संक्षेप कर अज्ञानरूपी अंधकारकी अतिधारा (प्रवाह) नाशकरवेके लिये सुकीर्तिको कारण सकल सुख करवेवारो ऐसो वैद्यचन्द्रोदयनामक ग्रंथको रचोहौं ॥ ३ ॥

चापल्यं यत्कृतं मे किमपि शिशुतया पण्डितास्तत्क्षमध्वम्
कुर्वे बद्धाञ्जलिं विच्चरणयुगलयोः कोटिदण्डप्रणामान् ।
ये दुष्टाः स्वस्वभावादिह किमपि मृषा मन्वते दोषभावात्
तद्वक्त्रेषु प्रसह्य प्रपततु महतामेव वाणीकृपाणी ॥ ४ ॥

जो लडकपनसे मैंने चपलता करी हो तो उसे पण्डित जन क्षमा करें, मैं आपके चरणयुगको हाथ जोडके कोटि प्रणाम कर्ता हूं और जो दुष्ट अपने दोषभावसे कुछभी झूंठ मानेंगे उनके मुखमें बलात्कारसे महात्मान्की वाणीरूपी तलवार पडे ॥ ४ ॥

अथ दूतावलोकः ॥ २ ॥

स्वज्ञातिः श्वेतवस्त्रो द्रविणयुतकरः क्षत्रियो ब्राह्मणो वा
ताम्बूलाढ्यः सुशीलः शुभवदनवदः स्यात्प्रशस्तोऽत्र दूतः ।
शस्ता योषिन्न दौत्ये न च जनयुगलं नाङ्गहीनो न रोगी
शोकार्तो वा रुदन्वाऽऽगतहतपतितभ्रष्टशब्दान् ब्रुवाणः ५

रोगीकी निज जातिको सुपेद वस्त्र पेहरें हाथमें द्रव्य लियें ब्राह्मण वा क्षत्रिय ताम्बूल खायें सुंदर स्वभाव सुमुख मृदुभाषी ये उत्तम दूत हैं, और स्त्री दूतकार्यमें अच्छी नहीं हे और न दो मनुष्य और न अंगहीन और न रोगी न शोकपीडित और रोतो नजाय और न जात बाहर और भ्रष्ट शब्दोंको न कहे ऐसो दूत उत्तम है ॥ ५ ॥

आगत्योपाश्रयेद्यो बलमथनदिशं पश्चिमामुत्तरां वा
शम्भोः काष्ठां स शस्तोऽपरदिशि न तुषांगारभस्मास्थिसंस्थः ।
रक्तस्रग्गन्धवस्त्रास्तृणलकुटदलच्छेदिनः पङ्कतैला-
भ्यक्तावक्षोजनासाशिरनिहितकरा ये च विक्षिप्तचित्ताः ॥६॥

जो दूत आकर वायव्यकोण पश्चिम उत्तर ईशानकोणप्रति बैठे सो उत्तम है और जो अन्य दिशामें बैठे तुष अंगार राख हड्डीपर स्थित हो लालमाला लाल चंदन लाल वसनवारो तृण लक्डी पत्र तोडवेवारो कीच और तैल लगायें छाती नाक माथेपर हाथ धरे और जाको भ्रमित चित्त होय सो दूत अच्छो नहीं हे ॥ ६ ॥

दूतस्योदितवर्णवृन्दमखिलं द्वेधा विधाय त्रिभि-
र्भक्त्वा व्योमनि मृत्युमाशु विवदेदन्यत्र संजीवनम् ।
षड्ग्रामद्विचतुस्तुरंगमरसच्छन्दोग्निभूदिङ्नवे-
मानंकांस्तदधोक्षराणि विलिखेदादीनि हान्तानि च ॥ ७ ॥

दूतके कहे सबरे अक्षरसमूहको दूने करे उनमें तीनको भाग दे शून्य बचे तौ रोगीकी मृत्यु होय और अंक बचे तौ रोगी जीवे एसो कहै. ऊँचे कोठे पाँच और आडे कोठे ग्यारह लिखे ऊपरके प्रथम ग्यारह कोठोंमें छे, तीन, दो, चार, सात, छे, चार, तीन, एक, दश, नो, ये अंक लिखनो नीचेके ग्यारह कोठोमें अकारादि स्वर लिखे बाँकी ३३ कोठोंमें ककारसे हकारतक वर्ण लिखें ॥७॥

षंढान्त्यस्वरवर्जितान् खलु पृथक्कृत्वाऽज्झलो रोगिणो
दूतस्यापि च नामवर्णनिचयादङ्केऽष्टभिः शोधिते ।
न्यूने वापि समे म्रियेत न तथाधिक्येऽक्षराणां नरो
दैवज्ञैर्गदवानितीरितमिदं चक्रं च दूताभिधम् ॥ ८ ॥

ऋवर्ण लृवर्ण यह ह्रस्वदीर्घभेदसे ४ ओर अंत्यवर्ण जो अः ये पांच वर्ण स्वरमेंसे कम लिखना ऐसे अच् ओर हल् इनकों पूर्वोक्त-रीतिसे भिन्न भिन्न कोष्टकमें लिखके रोगी ओर दूतके नामाक्षरको एकत्र करवेसे जो स्वर ओर हल्की संख्या होय तामे एकबेर आ-ठके अंकको शोध देनो बाकी बचे भये अंक जो आठसे न्यून अ-

थवा आठही होय तो वह रोगी मरे, ओर जो आठसे अधिक बचे तो वह रोगी मनुष्य नही मरे, या प्रकार ज्योतिपियोंने यह दूत-नामक चक्र प्रश्नके वास्ते कह्यो हे ॥ ८ ॥

दूतचक्रम् ।

६	३	२	४	७	६	४	३	१	१०	९
अ	आ	इ	ई	उ	ऊ	ए	ऐ	ओ	औ	अं
क	ख	ग	घ	ङ	च	छ	ज	झ	ञ	ट
ठ	ड	ढ	ण	त	थ	द	ध	न	प	फ
ब	भ	म	य	र	ल	व	श	ष	स	ह

अथ शकुनावलोकः ॥ ३ ॥

याने मातङ्गविप्रास्तुरगफलवृषच्छत्रमांसोदकुम्भा
योषित्पुत्रान्विता वा सुरभिरपि तथा खञ्जरीटा मयूराः ।
वीणाभेरीमृदङ्गाम्बुजपटहरवा वेदमाङ्गल्यघोषा-
श्चाषः सिद्धान्नभूभृत्कुसुमपुरवधूचन्दनाद्याः प्रशस्ताः ॥९॥

चलतेसमय हाथी विप्र घोडा फल बैल छत्र मांस जल कुम्भ पुत्रको लिये स्त्री तथा गौ खंजन मोर वीणा भेरी मृदंग कमल ढोलके शब्द वेदध्वनि मंगलगीत पपैया पक्वान्न राजा फूल वेश्या चंदन आदिक उत्तम हैं ॥ ९ ॥

काणः काकोऽपसव्ये शुभ इह कथितः सव्यतः सारमेय-
श्चक्री श्येनाखुबभ्रूशफरदधिपयोरूप्यगोमायुमेषाः ।
प्रेतो नीरोदनश्च ज्वलदनलशिखः श्वेतवस्त्रध्वजा वा
चित्ते शस्तेऽथ सिद्धिः प्रभवति भिषजो नान्यथाकिंबहूक्तैः १०

वायें कानों और कौआ शुभ दायें ये शुभ कहे हैं, कुत्ता कुह्मार-शिकरा मूषो न्योरा मत्स्य दही दूध चाँदी श्यार मेंढा मुरदा रुदन-रहित जाज्वलअग्नि श्वेतवस्त्र ध्वजा और प्रसन्नचित्त ये सब वैद्यको सिद्धिदाता हैं यासें विपरीत बहुत कहवेसे क्या प्रयोजन है ॥१०॥

अथ शारीरावलोकः ॥ ४ ॥

छायेवार्कस्य नित्या प्रकृतिरिह चिदानन्दरूपस्य पुंसः
पूर्वं स्वीयैः प्रपञ्चैः समसृजदखिलं विश्वमेतत्सतत्त्वम् ।
कर्मायत्तोऽत्र जीवो निवसति च मनोदूतवान्कश्चिदेहः-
पुण्याभ्यां विन्दमानो गदमपगदतां सञ्चिताभ्यां पुरैषः ११

चिदानंदरूपवारे परमेश्वरसे सूर्यकी छायासी नित्यप्रकृतिवारी माया पैदा होके वाने पहले सत्व रज तम जो अपने प्रपंच हे तिनकरके तत्त्वयुक्त या सब जगतको पैदा कियो या जगतमें मन जाको दूत हे एसो कर्मके आधीन कोई जीव निवास करेहे सो पहलेसे संचित जो पाप पुण्य हैं तिनकरके रोग और आरोग्यताको प्राप्त होवेहे ॥ ११ ॥

भूतैर्दोषैः कलाभिर्निजमलसहितैर्धातुभिश्चोपधातु-
त्वङ्मर्मस्नायुसन्ध्यस्थिभिरपि विविधैराशयैस्तैः शिराभिः ।
पेशीभिः कण्डराभिर्धमनिभिरभितो रन्ध्रकैः सोऽतिसूक्ष्मैः
साकं तत्राविरास्ते किल सपदि रजःशुक्रयोः सङ्गकाले ॥ १२ ॥

पंच तत्त्व वात पित्त कफ सप्त कला और अपने मलके सहितधातु उपधातु त्वचा मर्म स्नायु जोडी हड्डी नानाप्रकारके आशय शिरा पेशी कण्डरा नाडी ओर चारोंओरसे अतिछोटे छेदके सहित शीघ्रही वीर्य रुधिरके संगकालमें वहां जीव निश्चय पैदा होय है ॥ १२ ॥

एकाहोरात्रतः स्यात्कललमथ भवेद्बुद्बुदं पंचरात्रात्
प्रोक्तं पिण्डं दशाहान्मनुभिरिह दिनैर्जायते मांसपेशी ।
मासाद्गर्भो घनः स्यात्तदनु च परतो मूर्धशाखांकुराः स्यु-
स्तार्त्तीयीकेऽखिलाङ्गान्यपि रसहृतये नाभिदेशे च नाला १३

एक रात्रिदिनमें कलल होय और तापीछे पाँचरातमें बुलबुला और दश दिनमें पिण्ड और चौदह दिनमें मांसकी गाँठ होजाय हे एसे एक महीना वो गर्भ गाढो होय हे, दूसरे मासमें मस्तक हाथ

पाँवके अंकुर होवे हैं, तीसरे मासमें संपूर्ण अंग उत्पन्न होय हे, और रसहरणकरवेको नाभिदेशसे नाल होय हे ॥ १३ ॥

स्वल्पा बुद्धिश्चतुर्थे जठरगुदयकृत्प्लीहबस्त्यंत्रवृक्कम्
हृत्पक्वामाशयास्याद्यमपि शरमिते सूर्ध्वमन्यच्च षष्ठे ।
केशस्नाय्वस्थिपर्वाण्यपि नखरशिरश्चेतनात्वं तुरंगे
धातूनां सारमोजः प्रविशति हृदयं गर्भगस्याष्टमे च ॥१४॥

चौथे मासमें अल्पबुद्धि और पांचवे मासमें पेट गुदा यकृत प्लीह बस्ति आँत वृक्क हृदय पक्वाशय आमाशय मुख पैदाहोके ओर आगे छटे मासमें केश स्नायु हड्डी जोड और सातवे मासमें नख पेदा होय, शिरमें चैतन्यता और अष्टम मासमें धातुओंका सार ओज हे सो गर्भमें प्राप्त बालकके हृदयमें प्रवेश करेहे ॥ १४ ॥

गर्भात्संसारभीरुर्निपतति नवमे मासि मासेऽग्रिमे वा
मातुर्योनेश्च मुख्या इह चतुरधिका विंशतिर्नाडिकास्ताः ।
ऊर्ध्वं नाभेर्दशाधो दश च धमनयः पार्श्वयोश्चापि तिर्यक्
द्वे द्वे याभिर्यथेच्छं वपुषि च परितस्ते प्रसर्पन्ति दोषाः ॥१५॥

संसारसे डरवेवारो जीव नवमे मास वा दशमें मासमें गर्भसे पैदा होय माताकी योनमें मुख्य चौवीस नाडी हैं वे एसे दश नाभीके ऊपर और दश नाभीके नीचे हैं, पार्श्वमें तिरछी दो दो नाडी हे इन नाडियोंकरके देहमें यथेच्छ चारों ओरसे वातपित्तकफ फेले हैं ॥ १५ ॥

तत्रस्थैः सूक्ष्मरन्ध्रैर्मुनिभिरिह शतैरन्नतोयं वहद्भिः
पुष्टिं प्राप्नोति देहो विपुलमपि बलं प्रत्यहं वर्धतेऽत्र ।
दोषाः सत्वादियुक्ता नृवपुषि कुपिताः कुर्वते हेतुभिः स्वै
रोगान् देहे च चित्ते त इह पृथगथो द्वन्द्वशः सर्वशश्च १६

ता देहमें छोटे छेद सौ अन्न जलको पहानेवाले मुनियोंने कहे हैं उनसे देह पुष्टिता और अति बलको भी प्राप्त होय है दिन२ बढे हैं वातादि दोष हैं ते अपने कारणसे कुपित हो देहमें और चित्तमें

रोग करे हैं वो रोग यहां मनुष्यके देहमें सारादियुक्त जे दोष अल-ग २ और दो दोषसे और तीनोंसे होय हैं ॥ १६ ॥

अथ कालबोधावलोकः ॥ ५ ॥

यद्युत्तिष्ठत्यनामा भुवि निहितशिरस्युन्नमन्मध्यमस्य
प्रायो मृत्युः समीपे वपुरपि च भवेद्यस्य वा वस्तगंधि ।
हुंकारो यस्य शांतो हुतवहसदृशी फूत्कृतिः सोऽपि तद्वन्
नाभिस्थानं गुदं वै म्रियत इह नरः कम्पते यस्य तालुः ॥१७॥

यदि अनामा उठे और पृथ्वीपर निःसार गिरे माथो झुकायें रहे बहुधा उस्के समीपमें मृत्यु है, जाके देहमें वकराकीसी गंध आवे जाको कठोर भाषण हो जाके अग्निके समान फूत्कार शब्द होवे नाभिस्थान और गुदा तालु जाके काँपें वो मनुष्य मरे ॥ १७ ॥

अरुन्धतीं विष्णुपदं च गङ्गां ध्रुवं न यः पश्यति मातृबिम्बम् ।
स याति शीघ्रं परलोकयात्रां कर्तुंसमुत्सृज्य सुतादिमर्त्यान् १८

जो अरुन्धती विष्णुपद गंगा और ध्रुव मातृबिम्ब नहीं देखे सो शीघ्रही पुत्रादिक सब मनुष्यन्को छोड मरणयात्राको प्राप्त होवे ॥ १८ ॥

नेत्राग्रस्थितया कराङ्गुलिकया नो दृश्यते पूर्णिमा-
चन्द्रो येन दिनावसानसमये जीवेत्स एकं दिनम् ।
संरक्तोर्ध्वविलोचनो हुतवहस्पर्शोऽलिदेहच्छवि-
स्थूलोष्ठो दिवसद्वयेन मरणं धत्ते सुधापाय्यपि ॥ १९ ॥

नेत्रके आगे स्थित हाथकी अंगुली और पूर्णिमाको चन्द्र सायं-कालके समय नहीं देखे सो एक दिन जीवेगो और ऊंचे लाल नेत्र छूनेसे अग्निके समान देहछबि मोटो होट वाने अमृतभी पीयो होय तोभी मरेगो ॥ १९ ॥

शोणास्यः स मनोभ्रमो हृदयरुग् यः श्यावजिह्वातलो
घूर्णो घर्घरनिस्वनस्त्रिदिवसान् मृत्योर्वशः स्यान्नरः ।
नासाग्रं रसनाग्रमोष्ठयुगलं पश्येन्न यश्चक्षुषा
मृत्युं याति चतुर्थकेऽह्नि मनुजः पीतामृतोऽपि ध्रुवम् २०॥

जाको लाल मुख हो मन भ्रमसहित हो हृदयमें पीडा हो जाकी जिव्हाको तलकारो हो और घूमें घर्राटे भरे सो मनुष्य तीन दिनमें मृत्युके वश होगा और जो नेत्रसे नाकका अग्रभाग जिव्हाका अग्रभाग दोनो होठ न देखे सो मनुष्य अमृतभी पियो होय तौभी चौथे दिन अवश्य मृत्युको प्राप्त होगा ॥ २० ॥

अम्भःसेकसमीरतोपि पुलको नो यस्य पञ्चक्षपा
जीवेत्सोथ हृदंघ्रिपाणिसहसा स्नातस्य शुष्येत्परम् ।
षष्ठे सो म्रियते ह्यथो मुनिदिनेऽपश्येद्भ्रुवोरन्तरम्
नो यः कर्णयुगं च यस्य चलितं स्वस्थानतः किञ्चन ॥२१॥

जिस्के रोमांच जलसीचवेतें और पवनसेभी पैदा नहिहों सो पाँच रात जीवेगो और एकाएकी स्नान करवेतें हृदय पाँव हाथ शीघ्र सूखजाँय सो छटे दिन मरेगो जाको भौंहनको बीच बिलकुल नही दीखे और दोनो कान जाके स्थानसे चलित हों सो सात दिनमें मरजायेगो ॥ २१ ॥

शैत्यं यस्य न हन्ति चण्डकिरणः सन्तापकारी शशी
नो वा वेत्ति हिमाहिमेऽष्टमदिने प्राणानसौ मुञ्चति ।
कर्णे दण्डविघाततो नहि भवेद् राजी निमित्तं विना
बाधिर्यं भवतीह यस्य नवमे घस्रे स गच्छेन्मृतिम् ॥ २२ ॥

सूर्य जाके शीतको नाश नहीं करसके और चंद्रमा जाके दाहको नाश न करे और जाको शीत उष्ण इनको ज्ञान न हो वो आठमें दिन प्राणको छोडे और कानमें दंडा मारवेसों भी जो चैतन्य न हो और विनाकारण जाके बहरापन होजाय वो नवमे दिनमें मृत्युको प्राप्त हो ॥ २२ ॥

आत्मानं सकृदीक्षते विशिरसं तैले जले वा घृते-
प्यादर्शादिषु वासरे स दशमे लोकान्तरं गच्छति ।
आकृष्टा अपि न स्फुटंति च करांगुल्यो यदीयाश्च नो
यद्दत्तं बलिमाहरन्ति करटास्तस्यैशघस्रे मृतिः ॥ २३ ॥

जो जलमें तेलमें वा घृतमें दर्पणमें अपने अंगको मस्तकरहित

देखे सो दश दिनमें दूसरे लोकको जाय और जाकें एचनेसेभी हाथकी अँगुलीन्के शब्द न हों और काक जाके हाथके दिये बलिको मुखमें न धरे वो ग्यारह दिनमें मरजाय ॥ २३ ॥

अन्येषां वपुरीक्षते गतशिरोऽकस्माद्विलोमाथवा
प्राणान्मुञ्चति निश्चितं गदयुतः स द्वादशे वासरे ।
विच्छायः सहसा त्रयोदशदिने स्यान्मृत्युवश्यस्तदा
गच्छेत्पंचदशे मृतिं यदि विधुं पश्येत्समस्तासितम् ॥२४॥

औरको अंग देखवेमेंभी शिर न दीखे अथवा कभी वालरहित देह दीखे वह रोगी निश्चय बारह दिनमें प्राण छोडे और जाकों अपनी छाया एकाएकी न दीखे तो वो तेरहवे दिन मृत्युके वश हो और जो संपूर्ण चन्द्रमाकों कारो देखे वो पंद्रहवे दिन मरे ॥ २४ ॥

यांतीं व्युत्क्रमतो नदीं च कलयेऽद्योसौ कलावासरे
घस्रे सप्तदशेथ पश्यति तरुं यः शुष्कमार्द्रच्छदम् ।
मर्त्योष्टादशके दिने व्यसुरहो बुद्धिर्यदीया निशि
स्याद्व्यत्यासतया तदग्रिमदिने मृत्योर्वशे मानवः ॥ २५ ॥

जो उलटी नदी वहती देखे सो सोलवे दिन और वृक्ष सूखो तथा पत्ता हरे देखे वो सतरहवे दिन और जा मनुष्यकी बुद्धि दिनमें विपरीत हो सो अठारहवे दिन वा जाकी बुद्धि रातमें विपरीत हो सो उन्नीसवे दिनमें मरे ॥ २५ ॥

यस्तारा न समीक्षते स समये घस्राँस्तथा विंशतिम्
पश्येद् व्योमधरामिव व्यसुभवेद्यश्चैकविंशं दिनम् ।
यः पश्येत्सहसा रविं सविवरं द्वाविंशतिं वासरान्
जीवेत्सोऽथ विलोमगं च कलयेद्योसौ त्रयोविंशतिम् ॥२६॥

जो तारानको नही देखे सो वीस दिनमें और तैसे जो पृथ्वीकी नाई आकाशको देखे वो इक्कीसदिनमें और जो सहसा सूर्यको छेदयुक्त देखे सो बाईसदिनमें और बृहस्पतिके ताराको विपरीतवर्ण देखे वह तेईसदिनमें (मरे) ॥ २६ ॥

योह्रस्वः सहसा भवेत्स तु चतुर्विंशेऽथ दीर्घोऽग्रिमे
मृत्युं याति तदग्रिमेषु च दिनेष्वाराच्छवं वीक्षते ।
धूलीं दिक्षु समीक्षते दिवि दिवा तारास्तथा विद्युतम्
व्यभ्रायां धनुरैन्द्रमस्य मरणं मासद्वये निश्चितम् ॥ २७॥

जो एकाएकी छोटो होजाय वो चौवीसवे दिन और जो एकाएकी लंबो होजाय वो पच्चीसवे दिन मरे और जाकों मुर्दा पास दीखे सो छवीसवे दिन मरे । और जो दशोंदिशानमें धूल देखे और दिनमें तारा देखे तथा विनामेघके विजली देखे वो दो महिनामें मरे २७

दीपे वा समुपागते न लभते गन्धं च संप्रेक्षते
स्वां च्छायागतमस्तकामथ शृणोत्युद्दामघण्टारवम् ।
मासे याति तृतीयके यमपुरं लोकं चतुर्थेऽथ य-
च्छीर्षे न्यञ्चति चित्रवर्णसरठः कुर्वन्विचित्रां क्रियाम् ॥२८॥

और जाके निकट दीपक लायतें भी वाकों गंध न आवे और देखेभी नहीं और अपनी छाँयाकों माथोरहित देखे अथवा एकाएकी जोरतें घंटाको शब्द सुने वो तीसरे मासमें मरे और जो शिरके वालोंको एंचे और देहरंग जाको किरकेटाके भांति बदले अटपटे कार्यकरे वो मनुष्य चौथे मासमें मरे ॥ २८ ॥

मार्गे पंकयुतेऽथवा सरजसि स्यात्खण्डितं यत्पदम्
मर्त्यः पंचममास्ययं मरणतामाप्नोति निःसंशयम् ।
ज्योतिर्यस्य न दीप्यते नयनयोर्द्वन्द्वेङ्गुली पीडिते
षष्ठे मासि विपद्यते स नियतं पीतामृतोपि ध्रुवम् ॥ २९ ॥

अथवा कीचयुत मार्गमें और धूसयुक्त मार्गमें पाँय खण्डित दीखें सो मनुष्य निस्संदेह पाँचवे मासमें मरणको प्राप्त हो । और जाके नेत्रकी ज्योति घटजाय दो अंगुली हलती न दीखे वाने अमृतभी पी लीयो होय तौभी वह छटे मासमें निश्चय मरे ॥२९

जीवं विष्णुपदत्रयं सुरपदं सन्मातृकामण्डलम्
तारापुञ्जमरुन्धतीमहिमगुं शुक्रं ध्रुवं लाञ्छनम् ।

एतेष्वेकमपि स्फुटं तु पुरुषः पश्येन्न यः प्रेक्षितं
सोऽवश्यं विशतीह कालवदने संवत्सरादर्धतः ॥ ३० ॥

बृहस्पति तीनों विष्णुपद सुरपद शुभ मातृकामण्डल तारासमूह अरुंधती सर्प राहु शुक्र ध्रुव लांच्छन इनमेंसे जो कोई मनुष्य एकको भी न देखे तो वो छै महीनाके भीतर कालके मुखमें प्रवेश करै ३०

पीत्वा वारि तृषा न याति सहसा वृद्धिर्वराङ्गे भवेद्
भुक्तान्नस्य न यस्य तृप्तिरसकृन्मासे व्यसुः सप्तमे ।
यः पश्येद्विविधं हिरण्मयतरुं वन्यं स मास्यष्टके-
ऽथो शूरो भयवाँश्च धर्मनिपुणोऽशांतो विकारी पुमान् ॥ ३१
स्थूलांगोपि कृशः कृशोऽपि सहसा स्थूलत्वमालम्बते
श्यामो वा कनकप्रभो यदि भवेद् गौरोऽपि कृष्णच्छविः ।
इत्येवं प्रकृतेरुशंति चलनं मासेऽष्टमे मृत्युदं
सूर्यं श्यामहृदं विचित्रमथवा जीवेत्स मासान्नवा ॥ ३२ ॥

जल पीनेसे भी प्यास न जाय और अकस्मात् माथो भारी होजाय अन्न खानेसे भी तृप्ति न हो सो सात मासमें मरे । जो नानाप्रकारके वनके वृक्ष सोनेके देखे सो आठमे मासमें शूर भयवान हो धर्मनिपुण अशांत विकारी नर हो ॥ ३१ ॥ मोटे अंगवाला कृश और कृशभी शीघ्र मोठो होजाय यदि कारो सोनेके वर्ण और गौर कालो होजाय ये प्रकृतिविपरीतभावको प्राप्त हो तौ आठमें मासमें मृत्यु देवे । सूर्यको मध्य कालो अथवा विचित्र दीखे वो नौ मास जीवे या न जीवे ॥ ३२ ॥

श्यावौ स्तः श्रवणौ करौ सचरणौ नासा च मेढ्रं मुखं
पायुश्च स्फुटमेष जीवति जनः स्वास्थ्येन मासान्दश ।
यस्यांगादुपयाति फुल्लकुसुमस्तोमोपमः प्राणिनो
गंधः संयति मृत्युरस्ति नियतं स्वल्पैर्दिनैः खञ्जतः ॥ ३३ ॥

जाके कान हाथ पाँय नाक लिंग मुख गुदा काले होजाय सो नर निश्चय दश मास नहीं जीवे जाके अंगमें फूले पुष्पगु-

च्छके सम गंध आवे उस प्राणकी थोडे दिनमें खड्गसे निश्चय मृत्यु हो ॥ ३३ ॥

वैकृत्यं स्वरवर्णकेशनयनं त्वङ्मांसबुद्धीन्द्रिय-
घ्राणेषु प्रपतंति यस्य सहसा मंत्राणि वस्तून्यपि ।
यः पश्येत्प्रतिबिम्बमात्मवपुषश्छिन्नं जलादिष्वसौ
रोगी जीवति नेति किंचिदुदिता नृणामरिष्टा मया ॥ ३४ ॥

जाके स्वर वर्ण केश नेत्र त्वचा बुद्धि इन्द्रिय बिगड जाँय । जाके नाकमें नानाप्रकारकी सुगंध और सब वस्तु विपरीतसे देखे । जो अपने अंगको जल काच आदिमें खंडित देखे । वो रोगी मनुष्य रोगके अरिष्टसे थोडो भी नही जीवेगो ॥ ३४ ॥

अथ मूत्रावलोकः ॥ ६ ॥

धारामाद्यां विहायोषसि विमलतरे भाजने रोगिजंतो-
र्धृत्वेत्थं धैर्ययुक्तो भिषगतिनिपुणः संपरीक्षेत मूत्रम् ।
बिंदुं तैलस्य दत्वा तदुपरि वितते तत्र साध्योऽथ कृच्छ्रात्
साध्यःपिण्डायमाने तदनु तलगते स्याच्च साध्योप्यसाध्यः ३५

निर्मल काचके पात्रमें प्रातःकाल रोगी मनुष्यके मूत्रकी प्रथम धारा छोडके ताके ऊपर तैलकी बूँद पटकके अति धीरे निपुण वैद्य मूत्रकी परीक्षा एसे करै । यदि मूत्रमें तैल फैलजाय तौ साध्य । बिंदु पिण्डाकार होजाय तौ कृच्छ्रसाध्य । जौ बूँद नीचे बैठ जाय तौ असाध्य है ॥ ३५ ॥

नीलं रूक्षासितं वा प्रभवति कुपिते मारुते चाथ पित्ते
पीतं तैलप्रभं वारुणमथ कफतः स्निग्धशुभ्रं घनं च ।
उष्णं स्निग्धं सरक्तं भवति रुधिरतश्चाथ सामेऽम्बुकल्पं
सौवीराभं निरामे विमलमतिसितं ज्ञेयमह्नाय मूत्रम् ॥ ३६ ॥

वायुकोपसे नीलो कारो रूखो होय और पित्तसे पीलो तैलसो लाल और कफसे चीकनो गाढो सुफेद और रुधिरसे गरम चीकनो लाल होय रोगीको कांजी जलसो और आरोग्यको निर्मल अतिश्वेत कांजीसो वा मदिरासो मूत्र जाननो ॥ ३६ ॥

द्वन्द्वेतद् द्वन्द्ववर्णं भवति बहुविधं सन्निपातात्प्रवृद्धा-
दन्नाजीर्णाच्च मूत्रं भवति बहुतरं तण्डुलांभःसदृक्षम् ।
बिन्दुस्तैलस्य मूत्रे प्रसरति च यदा दिक्षु साध्यो विदिक्षु
स्यान्नो साध्यो मनुष्यो भ्रमति तरति वा मज्जति भ्रंशते च ३७

दो दोषसे दोवर्णबारो मूत्र होय त्रिदोषके वढेते अनेक रंगको और अन्नके अजीर्णतें बहुत मूत्र चाँवलके जलसो होयहे जो तैलकी बूँद फैल जाय तौ साध्य और भ्रमण करे तिरे डूबे टूक २ होजाय तौ वो साध्य नहीं है ॥ ३७ ॥

वस्त्रं खड्गं शरं वा लकुटमपि हलं सैरभं गात्रखण्डं
कूर्मं निर्मूर्द्धमर्त्यं मुसलमपि चतुर्मार्गकं चानुकुर्यात् ।
मूत्रं तैलं न जीवेदिह यदि मनुजश्चाथ जीवेत्सुधांशुं
हंसेभच्छत्रहर्म्यं सरसिरुहसरस्तोरणं चामरं वा ॥ ३८ ॥

जो मूत्रमें तैलकी बूँद वस्त्र खड्ग बाण लकडी हल भैंसा और शरीरके टूँक कछुआसी मनुष्यके माथे सी मूसल चोरायेके आकार होजाय सो नही जीवे । और जाके मूत्रमे चन्द्रमा हंस हाथी छत्र कमल महल सरोवर तोरण चमरसदृश तैलबूंद होजाय सो मनुष्य जीवे ॥ ३८ ॥

अथ मलावलोकः ॥ ७ ॥

बद्धं श्यामं सशब्दं मरुति च कुपिते पित्तकोपेतिपीतम्
पानीयाभं सफेनं सरुषि कफमले सान्द्रमायांकुरं च ।
रक्ते क्रुद्धे सरक्तं जलनिभमथ तद्वन्द्वकोपे द्विलिंगम्
सर्वैर्दोषैः सकोपैर्भवति किल मलं रोगिणः सर्वलिङ्गम् ॥३९॥

वातकोपसे मल वध्यो कारो शब्दसहित होयहे और पित्तकोपसे अति पीरो और कफकोपसे जल सो फेनयुक्त गीलो अंकुरित और रक्तकोपसे लाल जलसो और दो दोषके कोपसे दो चिन्हवारो सब दोषके कोपसे रोगीको मल सब लक्षणवारो होय है ॥ ३९ ॥

दुर्गंधि श्यामवर्णं मलमरुणनिभं पाण्डुराभं विचित्रम्
मांसाभं चोष्णमेतत्प्रभवति मरणायैव रोगान्वितस्य ।

विस्रं शैथिल्ययुक्तं मुहुरपि च मुहुर्निःपतत्स्यादजीर्णा-
द्वर्चोदिङ्मात्रमेतन्निगदितमगदैर्लक्षणं वर्चसोपि ॥ ४० ॥

दुर्गंधि श्याम लाल पीलो विचित्र मांससो गरम मल रोगीको मरणके लियेही होवे हैं, दूस्यो शिथिलतायुक्त वार २ अजीर्णते मल होयहै और मललक्षण ये वैद्यनको दिक्प्रदर्शन मात्रही कहेहैं ॥ ४० ॥

अथ दृष्ट्यवलोकः ॥ ८ ॥

रूक्षं धूमाभमंतर्ज्वलदनिलरुषि स्याच्चलं चक्षुरुग्रम्
पित्तात्पीतं हरिद्रानिभमरुणनिभं दीपविद्वेषि दाहि ।
श्वेतं संस्रावि तेजोरहितमतिकफाद्द्वन्द्वकोपे द्विलिङ्गम्
निर्भुग्नं रक्तवर्णं कलुषमसितभं भीषणे सन्निपातात् ॥ ४१ ॥

वायुके कोपसे रूखे धूमसे भीतर जलें चलायमान अति टेढे नेत्र हों और पित्तसे पीले हर्दीसे लाल दीपक न देखसके दाहकर्ता हों कफसे श्वेत स्रावी तेजरहित दो दोषसे दो चिन्हयुक्त हों सन्नि-पातसे खंडित लाल बुरे कारे डरावनेसें हों ॥ ४१ ॥

एकं रौद्रं च भुग्नं विकसितमपरं मीलितं यस्य चक्षु-
स्तारा वा यस्य पश्येन्न किमपि कुटिलं चोर्ध्वगं यस्य वा स्यात् ।
रौद्रं यः प्रेक्षते वा भ्रमयुतमथवा कंपयुक्तारका वा
दृष्टिर्यस्यात्र साध्यो न भवति मनुजो रोगयुक्तः कदाचित् ४२

एक नेत्र भयानक टेढो उलटो खुल्यौ और दूसरो नेत्र मिच्यो जाकी पुतलीको तारो न दीखे और कुटिल ऊंचो देखे अथवा जाकी पुतली भयानक दीखे भ्रमयुक्त अथवा कंपयुक्त ये लक्षणयुक्त दृष्टि होय वो रोगी कभी साध्य नहीं है ॥ ४२ ॥

अथ नाड्यवलोकः ॥ ९ ॥

धृत्वा वामेन हस्तेन च लघिमयुजा कूर्परं रोगिजन्तो-
रन्येनालंब्य वैद्यः कलयतु धमनीमंगुलीनां त्रयेण ।
वामे हस्तेऽङ्गनानां यदि च तदपरे हस्तके पूरुषाणाम्
मूलेऽङ्गुष्ठस्य दूतीमिव सुखमसुखं देहवृत्तं वदंतीम् ॥ ४३ ॥

रोगीके दाँये हाथकों वैद्य अपने बाँये हाथसे पकड दाँये हाथकी तीन अंगुलीयोंसे नाडी देखे स्त्रीन्के बाँये हाथको देखे और मनुष्यके दाँयेही हाथकी देखे अंगुठाके मूलमें नाडी मनुष्यके सुख दुःखको दूतीसी कहनेवाली है ॥ ४३ ॥

वाताद्वक्राथ पित्तात्प्रभवति चपला श्लेष्मतः स्थैर्ययुक्ता
नाडी सोष्णा सवेगा ज्वर इह कुपिते कामरुङ्भ्यां सवेगा।
वाते क्रुद्धे जलौकाभुजगगतिमती पित्तकोपे कुलिंगा-
ध्वांक्षाभ्यां भेकवद्वा कफरुषि च समं हंसपारावताभ्याम् ४४

नाडी वातसे टेडी चले पित्तसे चपल होय कफसे धीरी ज्वरकोपसे गरम वेगयुक्त कामबाधासे वेगवारी वो वायुकोपसे जोक सर्पकी गतिवारी पित्तकोपसे कुलिंग काग मेडकासी और कफकोपसे हंस वा परेवाके समान गतिवारी होय है ॥ ४४ ॥

मंदा काले कदाचित्क्वचन झटितिगा द्वंद्वकोपेऽथ नाडी-
लावैवत्तीरकैर्वा चरति सममसौ तित्तिरैर्वा त्रिदोषे ।
स्थित्वा स्थित्वा वहेद्वा मुहुरपि च मुहुर्विच्युता स्थानतो या
याति क्षीणातिशीता हरति शिवशिव प्राणमह्नाय नाडी ४५

और दो दोषके कोपसे नाडी कोई समय मंद और कोई समय तेज चले. त्रिदोषमें लावा तीतर बतकसरीखी चले. जो वेर २ ठेर २ के स्थानको छोडके अति क्षीण शीत चले हे शिव २ वह नाडी प्राणको नाश करेहे ॥ ४५ ॥

मंदाग्नेः क्षीणधातोरपि चरति तथा मंदमंदैव नाडी
कोष्णा गुर्वी सरक्ता वहति गुरुतरा चापि सामा च मंदा।
दीप्ताग्नेर्वेगयुक्ताप्यतिलघुरथ सा सौख्ययुक्तस्य सुस्था
चिंताभीशोकयुक्तस्य च भवति कृशा हीनवेगा च नाडी ४६

मंदाग्नि क्षीणधातुसे नाडी मंद २ चले रक्तविकारसे गरम भारी चले और आमसे अति भारी मंदी चले दीप्ताग्निसे वेगयुक्त अति हलकी चले सुखयुक्तकी सुस्थ और चिंता भय शोकवारेकी दुर्बल हीनवेग नाडी चले ॥ ४६ ॥

मध्याह्ने वह्नितुल्या ज्वरयुतमनुजस्यातिवेगा मलानाम्
याते पाते चलाम्बु यदि भवति तदा स्यात्तृतीयेह्नि मृत्युः ।
सक्रोधस्यातिवेगा प्रभवति धमनी सुस्थिरा तृप्तिभाज-
स्तज्ज्ञानात्तत्तदन्नं कलयतु निपुणः पण्डितो जंतुके तु ॥४७॥

ज्वरयुक्त नरकी मध्यान्हमें अतिवेगवती और मलके पात तथा वेग होनेसे वहते जलके सम चले वाकी तीन दिनमें मृत्यु हो. क्रोधवान्की अतिवेगवती नाडी होयहे और तृप्तिताकी स्थिर निपुण पण्डित वैद्य या ज्ञानसे मनुष्यकी नाडीको देखे ॥ ४७ ॥

अथासाध्यावलोकः ॥ १० ॥

निद्रानाशो निशायां प्रभवति च तथा कंठकूपे बलासो
देहे दाहोऽतिसूक्ष्मा लघुरथ धमनी प्रस्खलंती च जिह्वा ।
हीयंते यस्य शीघ्रं बलदहनमनःशक्तयः सेन्द्रियाङ्गा-
स्तद्भैषज्यं वदंति स्मरणमिह बुधाः केवलं रामनाम्नाम् ॥४८॥

रात्रिमें निद्रानाश और कंठमें कफ होय देहमें अतिदाह धीरे हलकी नाडी चले जीभ चिपके जाकी शीघ्र बल मन इंद्रियशक्ति अंगहीन हों उसको पण्डित वैद्य केवल रामनामस्मरणरूपी औषध कहते हैं ॥ ४८ ॥

ये कौलाः कर्मजा ये चिरसमयभवा ये च ये सर्वदोषा
ये वा सोपद्रवा ये बहुदुरितवतो ये च मंदाग्निभाजः ।
येत्युग्राद्ये सरोषादपि च निजकृतोत्कर्मणः कायचेतः-
संजाता ये च येति हुतवलजनयस्तेप्यसाध्या गदाः स्युः ४९

जो रोग कुलपरंपरासे चले आये हों जो पापकर्मसे पैदा और बहुतकालके पैदा और जो सर्व दोषसों भये वा जो उपद्रवसे युक्त बहुत पापनसे भये मंदाग्नि वा देह मनके अति उग्र कुपित निजकर्मसे भये और जो भस्मक रोगसे भये वोही रोग वैद्यनको असाध्य कहनो ॥ ४९ ॥

रक्तास्यो हृष्टरोमोच्छ्वसिति च हृदयाद्ग्रंथिशूली च यः स्यात्
मूढो विभ्रांतनेत्रो म्रियत इह नरः क्षैण्यहिक्कातृषावान् ।

संक्षिप्ते यद् भ्रुवौ स्तः शिरसि कचचया यस्य सीमंतवंतो
यो रोगी दीर्घरात्रौ स्वपिति च दवथुस्वेदवैवर्ण्ययुक्तः ॥५०॥

जाको लाल मुख रोम खडे और हृदयसे श्वास ले गांठोमें दर्द होय मूढतासे नेत्र भ्रमें क्षीणता हिचकी प्यास जाकी भौं सुकड गई हों केशसमूहकी गाँठ बंध गई हो जो रोगी बहुत रात सोवे कंप पसीना देहको रंग विगड्यो होइ वो मनुष्य मरे ॥ ५० ॥

यः स्वप्ने प्रेतयुक्तः पिबति च मदिरां यः खरोष्ट्रादिरूढः
तैलाभ्यक्तो यमाशामनु च चलति यो यांत्यमी प्रेतभावम् ।
यो लुंचेत्केशसंघान्नखरमपि मुखेनाधरांश्च द्विजाग्रैः
खादेद्विभ्रांतनेत्रः स्खलिततमवचाः क्षिप्रमाप्नोति मृत्युम् ५१

जो स्वप्नमें प्रेतके संग मदिरा पीये और गधा ऊंट आदिपर चढे तेलसे न्हाय दक्षिणदिशाको चले वो मृत्युको प्राप्त हो जो अपने केशसमूहको नौंचे मुखसे नख और दाँतोंसे होठनको खाय जाके नेत्र अति भ्रमें टूटे वचन कहे वो जल्दी मृत्युको प्राप्त हो ॥५१॥

उरगशतभिषार्द्रास्वातिमूलेन्द्रपूर्वा-
भरणिषु किल वारे भानुभौमार्कजानाम् ।
प्रतिपदि च चतुर्थीद्वादशीषष्ठिकासु
द्रुहिणहरिहरोक्तो रोगिणां मृत्युकालः ॥ ५२ ॥

आश्लेषा शतभिषा आर्द्रा स्वाती मूल ज्येष्ठा पूर्वा भरणी आदि नक्षत्रमें सूर्य मंगल शनिवारमें और परवा चौथ द्वादशी छट्ट इनमें ब्रह्मा विष्णु शिवको कह्यो रोगीको मृत्युकाल है ॥ ५२ ॥

असाध्यलक्षणं चैतत्सामान्यमभिवर्णितम् ।
अभिधास्ये विशिष्टं तु तत्तद्रोगविनिश्चये ॥ ५३ ॥

ये असाध्य लक्षण सामान्यतासे मेनें वर्णन किये अव बांकीं जा जा रोगके निश्चयार्थ विशेष कहूँ हूँ ॥ ५३ ॥

अथ वर्णस्वरावलोकः ॥ ११ ॥

बाणांकात्मनि मंडले अइउएओकादि वर्णं लिखे-
दायुर्वेदादिकर्ता कथयति तदधस्तिथ्यादिपंक्तिक्रमात् ।

अर्कग्लौगुरुशुक्रसौरिकुजविच्छून्यान्यथाधः क्रमात्
पौष्ण्यादीन्यथ सप्तभानि च पुरावत्पंच पंचाग्रतः ॥ ५४ ॥
आख्यायाः प्रथमाक्षरं भवति यत्कोष्टे ततः कोष्टका
बालाख्यः सुकुमारकोप्यथ युवा वृद्धो मृतश्च क्रमात् ।
भं वारश्च तिथिस्त्रयं भवति चेदेतन्मृताख्यं तदा
मृत्युर्निश्चयतोऽन्यथा सुखमिति प्रोक्तो नृणां निश्चयः ॥५५॥

वाण५अंक९आत्मनि १० कोष्टकोंमें अ इ उ ए ओ और ककारादि अक्षर लिखने उन्के नीचेके कोष्टकोंमें आयुर्वेदादिके कर्ता कहे परवा आदि तिथि क्रमसे लिखनो सूर्य चन्द्र गुरु शुक्र शनि मंगल बुध उस्के नीचे क्रमसे लिखे फिर शून्य लिखे उस्के नीचेके कोष्टकोंमें रेवती आदि पच्चीस नक्षत्र लिखने ॥ ५४ ॥ नामको प्रथम वर्ण जिस कोष्टकमें हो उनमें प्रथम कोष्टकको नाम बाल दूसरेको सुकुमार तीसरेको युवा चौथेको वृद्ध पाँचवेको मृत नक्षत्र वार तिथि ये तीनोंही होय तो मृताख्य कोष्टक जाननो वाकी मृत्यु हो इनसे विपरीत हो तो निश्चय मनुष्यको सुख कहनो ॥ ५५ ॥

वर्णस्वरचक्रम् ।

अ	इ	उ	ए	ओ
क	ख	ग	घ	च
छ	ज	झ	ट	ठ
ड	ढ	त	थ	द
ध	न	प	फ	ब
भ	म	य	र	ल
व	श	ष	स	ह
१	२	३	४	५
६	७	८	९	१०
११	१२	१३	१४	१५
नं.	भ.	ज.	रि.	पू.
सू.	चं.	०	०	०
मं.	बु.	गु.	शु.	श.
रे.	पुन.	उ.फा.	अनु.	श्र.
अ.	पु.	ह.	ज्ये.	ध.
भ.	श्ले.	चि.	मू.	श.
कृ.	म.	स्वा.	पू.षा.	पू.भा.
रो.	पू.फा.	वि.	उ.षा.	उ.भा.
मृ.	०	०	०	०
आ.	०	०	०	०

अथ याप्यसाध्यावलोकः ॥ १२ ॥

ये शांता भैषजैः स्युः पुनरपि च विना तैरकस्माद्भवेयु-
र्ये वा रोगा द्विदोषा मुनिभिरभिहिता रोगिणस्तेऽत्र याप्याः ।
दीप्ताग्नेर्भूरिवित्तस्य च भवति पृथूपद्रवाश्चैकदोषा
रोगाः साध्याः सपथ्यस्य च हितमगदं सेवमानस्य जंतोः ५६

जो रोग औषधसे शांत होजाँय और फिरभी अकस्मात् पैदा

होजाय जो रोग दो दोषज मुनियोंने कहे वो रोगीको यहाँ याप्य हैं. दीप्ताग्नि और धनवान् पुरुषके अति उपद्रव और एक दोषसे होय वो और जो पथ्यसे हितकारी दवा सेवन करवेवारे मनुष्यको रोग साध्य हैं ॥ ५६ ॥

अथ वातकोपकारणावलोकः ॥ १३ ॥

रूक्षैरन्नैश्च तोयैरतिकटुकतया भूरिभुक्तैः कषायै-
र्निद्रानाशव्यवायप्रतरणबलवद्विग्रहातिश्रमैश्च ।
अन्ने जीर्णे निशांतेपि च दिनविगतौ वार्धके भोजनेन
कंगूश्यामादिभुक्तैरपि भवति नृणामत्र वातप्रकोपः ॥५७॥

रूखे अन्नसे जलसे अति कटु कषाय वहुत खानेसे न सोयवेसे मैथुनसे पैरवेसे बलवानसे युद्ध करनेसे अतिश्रमसे और अन्न न पचवेसे प्रातःसंध्याकालके भोजनसे वृद्धावस्थामें भोजनके अंतमें कांगनी शमा आदिके भोजनसे सकल मनुष्यको वातकोप होयहै ॥५७॥

अथ पित्तकोपकारणावलोकः ॥ १४ ॥

मध्याह्ने चार्धरात्रे तरणिकरनिभो भोजने स्याद्विदाहः
क्षाराभ्यां चारनालैर्दधिकटुकसुरामैथुनाम्लैरशीतैः ।
जीर्यत्यन्ने प्रकोपैर्बहुभिरनशनैश्चामिषैर्वा तिलैश्च
ग्रीष्मे पित्तं विधत्ते शरदि च सहसा प्राणकायेषु रोगम् ५८

मध्यान्हमें और आधी रातमें सूर्यकी किरण सेवनसे भोजनके पीछे विदाही क्षार और कांजी दही चिरपिरे मदिरा मैथुन खट्टो गरम इनके सेवनसे अन्न पचनेमें और बहुत मांस तिल खानेसे वो मनुष्य ग्रीष्मकालमें पित्तको धारण करे और शरदकालमें एकाएकी कोपकर प्राणदेहीमे रोग करेहै ॥ ५८ ॥

अथ कफकोपकारणावलोकः ॥ १५ ॥

दध्ना दुग्धेन शैत्यालघुमधुरदिवास्वप्नकव्यान्नतोयै-
स्तैलैरिक्षुप्रभेदैरपि समविषमप्राशनाध्यासनैश्च ।
बाल्ये वै पूर्वरात्रे दिवसवदनके भोजनादौ वसन्ते
पिष्टान्नैः पायसैर्वा नृवपुषि च बहुलः स्याद्बलासप्रकोपः ५९

दही दूध ठंडो भारी मीठो दिनमें सोनों नवीन जल अन्न तेल ईखभेद सम विषम भोजनादिसे बैठे रहनेसे बाल अवस्थामें साँझ पीछे प्रातसमें भोजनके पहले वसंत ऋतुमें पीठीके अन्न वा पायससे मनुष्यके देहमें बहुत कफ प्रकोप होयहै ॥ ५९ ॥

अथ त्रिदोषकोपलक्षणावलोकः ॥ १६ ॥

शंखश्रोत्रांघ्रिमूर्द्धभ्रूकुटिहनुहृदि स्कंधमन्यासु पीडा
रात्रौ स्याद्वासरेल्पा क्वचन च भुजयोः स्तः सुसंकोचदैर्घ्ये ।
क्लोमप्लीहाक्षकक्षाकटिविटपयकृद्वस्तिपृष्ठत्रिके स्या-
दुच्चैः शूलं च नाभीगुदजठरगुदोपांतवक्षोण्डकेषु ॥ ६० ॥

नार कान पाँय माथो भौंह डाढी हृदय कंधा नाडी इनमें पीडा रातमें और दिनमें बाँहनको संकोच या कभी दीर्घता क्लोम प्लीह नेत्र कांख कटी विटप यकृत् बस्ति पीठ और पीठको हाड टूँडी गुदा पेट गुदाके पास छाती आँड इनमे जोरसे पीडा ॥ ६० ॥

वर्चःकार्कश्यमुच्चैर्वदनविरसता रात्रिनिद्रानिवृत्ति-
स्त्वक्पारुष्यं सहाग्नेरपि विषमतया स्यात्समीरप्रकोपः ।
पीतत्वं मूत्रविट्त्वङ्नखनयनमुखे स्वेदसंतापतोषा-
तीसारभ्रांतिमूर्च्छाप्रलपनमरुचिः पैत्तिके शीतवांछा ॥ ६१ ॥

मलमें कठोरता मुखमें बहुत विरसता रातमें नींदनाश त्वचाकी कठोरता अग्नियुक्तविषमता वातकोपमें हों मूत्र मल त्वचा नख नेत्र मुखमें पीलापन स्वेद संताप शांति अतीसार भ्रांति मूर्च्छा वक्रवाद अरुचि ठंडकी इच्छा पित्तसे होती है ॥ ६१ ॥

हृत्क्लेशास्यप्रसेको वदनमधुरता पाण्डुताक्ष्णोश्च कण्डू-
स्तन्द्रावक्त्रप्रलेपो वपुषि च गुरुता मांद्यमग्नेश्च कासः ।
प्रज्ञानाशोतिनिद्रा चुलुचलुकरणं श्लेष्मणः स्यात्प्रकोपे
कंठोष्ठघ्राणकर्णे क्षणरदरसनामूलतालुस्थलेषु ॥ ६२ ॥

हृदय क्लेश मुखमें पसीना मुखमें मीठापन नेत्रमें श्वेतता और खुजरी तंद्रा मुखमें प्रलेप और अंगमें भारापन मंदाग्नि और कास बुद्धिनाश अतिनिद्रा कंठ होठ नाक कान नेत्र दाँत जीभकी जड तालु स्थान इनमें पीडा कफकोपसे होयहै ॥ ६२ ॥

अथ निदानपंचकावलोकः ॥ १७ ॥

सामान्यं दोषचिह्नं निगदितमिह तद्धेतुसंयुक्तमेतज्
ज्ञेयं सर्वेषु रोगेष्वनभिहितपृथग्धेतुचिह्नेषु वैद्यैः ।
हेतुप्राग्रूपरूपैरुपशयसहितैस्ते च संप्राप्तियुक्तै-
र्ज्ञेयाः प्राधान्यसंख्याबलसमयविकल्पैः समेता भिषग्भिः ६३

यहां सामान्य रूपसे दोषनके चिन्ह कहे हैं । अब जिन रोगनके अलग २ दोष चिन्ह नही कहेहैं तिनको वैद्यलोग निदान पूर्वरूप रूप उपशय संप्राप्ति तथा प्राधान्य संख्या बल आदि संप्राप्तिके भेदयुक्त या प्रकार वैद्यलोग निदान पंचकको जाने ॥ ६३ ॥

रोगो रोगस्य कश्चिद्भवति भवकरः सोपि पूर्वं स्वतंत्रः
पश्चाद्धेत्वर्थकर्ता तदुभयजनकः कश्चिदेकार्थकृच्च ।
हेतुर्भूत्वा प्रशाम्येत् क्वचन च न गदोऽन्यस्य हेत्वर्थकृत्स्याज्
ज्ञेयः कात्स्न्र्येन तस्मादगदनिगदितो निश्चयोयं ज्वरादेः ६४

रोगको कारण रोगभी होयहे सोभी पहिले स्वतंत्र होयहे पीछे बल प्राप्त करके वोही हेत्वर्थकारी (रोगके पैदा करनेमें कारण) होजायहे जैसे ज्वरसे रक्तपित्त तथा ववासीरसे उदर रोग इत्यादि इनमेंभी कोई रोगरोगको पैदा कर शांत होजायहे जैसे ज्वरकी गरमीके कारण रक्तपित्त होयहे तव ज्वर शांत होजायहे तथा रक्तपित्त रह जायहे और कोई रोगरोगको प्रकट करके बन्यो रहे है जैसे ववासीर नही जाय और गुल्म आदि उदर रोगनकोभी पैदा करे है या प्रकारही ज्वरादि सकल रोगनको निश्चय कह्योहै ॥६४॥

अथ ज्वरावलोकः ॥ १८ ॥

दोषाः संजातरोषाः समधिगतरसाः संप्रविश्यामकोष्ठम्
रुद्ध्वा स्रोतांसि सर्वाण्यपि बहिरनलं पक्तिकोष्ठान्निरस्य ।
सर्पंतस्तेन साकं नृवपुषि परितस्तापमुच्चैर्दधानाः
कुर्वंत्यष्टौ ज्वरांस्ते पृथगथ सकलद्वंद्वजागंतवश्च ॥ ६५ ॥

दोष रोषकरके, रसयुक्त आमाशयमें जायके सब द्वारोंको रोक बाहर अग्निको पक्वाशयसे निकारके नरके अंगमें चारों ओर

फैलके अति ताप वढायके वातपित्तकफज त्रिदोषज द्वंद्वज आगंतुज आठ प्रकारके ज्वर पैदा करेहै ॥ ६५ ॥

द्वेषेच्छा वह्निशीतातपमरुचितृषागौरवं गात्रमर्दो
वैवर्ण्यं श्रांतिनेत्रप्लवपृथुपुलकारत्यहर्षाविपाकाः ।
वैस्वर्यं क्लांतिजृंभाशयनबहलताबल्यशीतं विरागो
बाल्ये वाण्यां हितायामपि मधुररसे पूर्वरूपं ज्वरस्य ॥६६॥

गरमी शरदी और घाम इनमें कभी रुचि कभी अरुचि होय प्यास भारीपन अंग टूटनो विवर्णता थकावट नेत्रस्राव वार २ रोमांच खडेहोना पीडा हर्षनाश अजीर्णता शब्द बिगडनो आलस्य जंमाई निद्राकी अधिकता बलहीनता शीत लगनो बालककी वाणी हित-कारीभी अछी न लगे मुखमें मधुरता ये ज्वरके पूर्वरूप हैं ॥६६॥

कंपः कंठोष्ठशोषो वदनविरसताध्मानशूलप्रलापा
रौक्ष्यारुण्ये मलाक्षि त्वचि शमनमथो संधिभेदो विरामः ।
शंखभ्रूबस्तिवक्षःकटिविटपशिरोवंक्षणस्कंधबाधा-
वेगक्षोभस्तनूष्मादिषु च विषमता विट्क्षवस्तंभजृंभाः ॥६७॥

कंप कंठ होठ सूखनो मुखमें विरसता अफरा दर्द बकवाद रूखापन लालता गीजडयुक्तनेत्र त्वचाकी शून्यता जोडोंमें दर्द अंगकी स्थिरता नार भ्रुकुटी मूत्राशय वक्षस्थल कमर पीठ कोहाड माथो वगल कंधामें पीडा गरमीको वेग और क्षोभ शरीरमे गर-माई आदिक और मलकी विषमता छीक उवासी रूकनो ॥६७॥

घर्मेच्छाकर्णनादावरुचि वमति यः पिंडिकोद्वेष्टनं च
क्लान्त्यश्रद्धे समीरज्वरजननमिदं लक्षणं लक्षणीयम् ।
वेगस्तीक्ष्णोऽतिसारो वमिमुखकटुता शोषमोहातितर्षाः
पायूर्वक्त्रोष्ठनाशोऽप्यरुचिरपि मदो विप्रलापो भ्रमौ च ॥६८

घामकी इच्छा कर्णनाद अरुचि वमन देह जकडनो आलस्य अश्रद्धा वातज्वरके लक्षण हैं इन्हेदेखनो । बहुत वेग अतिसार वमन मुखमें चिरपराहट और शोष मोह अतिप्यास गुदा मुख होठ इनको नाश अरुचि और मद वकवाद भौर ॥ ६८ ॥

पीतत्वं मूत्रविट्त्वङ्नखनयनमुखे स्वेदसंतापदाहा
निद्राल्पत्वं भवंति ज्वर इह विषमाः पैत्तिकेमी विकाराः ।
स्तैमित्यं वेगहानिर्वदनमधुरतोदर्दतंद्राश्च तृप्तिः
शौक्ल्यं विण्मूत्रनेत्रेऽरुचिहिमबहुता रोमहर्षातिनिद्राः॥६९॥

मूत्र मल त्वचा नख नेत्र पीले मुखमें पसीना और संताप दाह अल्पनिद्रा इतने विषमविकार पित्तज्वरमें होयहैं ।

गीले कपडेसे देहको जडकनासा मालूम होना वेगनाश मुखमे मीठापन उदर्द तंद्रा और भूखनलगनो विष्ठा मूत्र नेत्र सुपेद अरुचि ठंड अतिलगनो रोमांच खडे होना अतिनिद्रा ॥ ६९ ॥

अंगानां गौरवं च ग्रथनमिव हृदः सप्रतिश्यायभावाः
कासः क्लेदो बलासज्वरजनितमिदं लक्षणं लक्षणीयम् ।

देहमें भारीपन और हृदय वँध्योसो हो प्रतिश्याययुक्त कास आलस्य इतने लक्षण कफसे पेदा ज्वरमें देखनों ।

तृण्मूर्च्छादाहमोहभ्रमवमिपुलकोन्निद्रता पर्वभेदो-
जृंभा कंठास्यशोषः शिरसि रुगरुचिर्वातपित्तज्वरे स्यात् ७०

प्यास मूर्च्छा दाह मोह भ्रम वमन रोमांच हर्ष निद्रानाश जोडोंमें दर्द जँभाई कंठ मुख सूखनो माथेमे पीडा अरुचि वातपित्तज्वरमें होयहे ॥ ७० ॥

स्तैमित्यं भ्रांतितंद्राहिमतिमिरशिरःपर्वरुक् पीनसाति-
श्वासश्चाथो विबंधोऽरुचिरपि पवनश्लेष्मतापस्य लिंगम् ।

गीले कपडेसे देहको जडकनासा मालूम होना भ्रांति तंद्रा ठंड अँधेरो माथोजोडमे पीडा अति पीनस श्वास और मल न उतरनों अरुचि ये वातकफज्वरके लक्षण हैं ।

तृड्दाहस्तंभशीतभ्रममदकसनं लिप्ततिक्तास्यताति-
स्वेदोऽहृल्लासतंद्रारुचिगदितमिदं श्लेष्मपित्तस्वरूपम् ॥ ७१ ॥

तृषा दाह स्तंभ शीत भ्रम मद कास लिप्यो कडुओ मुख, अतिपसीना उत्साहभंग तंद्रा अरुचि ये कफपित्तज्वरको स्वरूप कह्यो हे ॥ ७१ ॥

तंद्रा गीतादिनानाविकृतिरबलता श्यावरक्ताभकोष्ठाः
पित्तास्रश्लेष्मवांतिः शिरसि हृदि च रुक् कंठशूकत्वमोहौ ।
कर्णौ सस्वानपीडौ तृडरतिकसनं शीतदाहातिनिद्राः
स्वेदानामव्यवस्था प्रलपनमरुणे सास्रभुग्ने च नेत्रे ॥ ७२ ॥
जिह्वा दग्धेव रूक्षा स्वरलघिममुखास्निग्धता विड्विबंधाः
स्वल्पा वाचि प्रवृत्तिश्चिरमलपचनं सन्निपातस्य रूपम् ।

तंद्रा गीतादि नानाविपरीतभाव दुर्बलता काली लाल कांति कोठ रोग पित्त रक्त कफकी वमन माथे और हृदयमें दर्द कंठमें कॉटेपडनो मोह कानमें शब्द, और पीडा प्यास, दर्द कास ठंड दाह, अतिनिद्रा पसीनाकी विषमता वकवाद रक्तसे लालआंसूयुक्त फटे नेत्र ॥७२॥ जलीसी रूखी जीभ अल्पस्वर मुखमें रूखापन मलअवरोध कम-बोलनों देरसे दोष पचनो ये सन्निपातको स्वरूप है ।

रक्तष्ठीव्यस्रुवान्त्यैकनयनविकृतेर्भुग्ननेत्रोऽतिशैत्यैः
शीतांगः संधिगः स्यात् सहितगलरुजाकंटकः कण्ठकुब्जः ।

रक्तकी वमन करे सो रक्तष्ठीवी एक नेत्र टेडो होजाय सो नेत्र भग्न बर्फके समान ठंडो अंग होजाय सो शीतांग गांठ २ में दर्द करे सो संधिग गलमें कांटे युक्त दर्द करे सो कंठकुब्ज होता हे ॥ ७३ ॥

तंद्राद्यस्तंद्रिकाः स्यादथ रसनहतेर्जिह्वको दाहरुग्भिः
रुग्दाहोऽथांतकस्तैः प्रभवति सकलैर्विप्रलापैः प्रलापः ।
भ्रान्त्या चित्तभ्रमोऽथ श्वयथुरुगुदयैः कर्णकः कर्णमूले-
ऽभिन्यासः सर्वचेष्टारहित इति सदा विश्वभेदास्तदीयाः ७४

तंद्रा आदिकवाला तंद्रिक होयहे और जीभको नाश करनेवाला जिह्वक होताहे और दाह तथा दर्दवाला रुग्दाह होताहे सकल चिन्हवाला अंतक होताहे विशेष बकवानेवाला प्रलापक होताहे भ्रांति करनेवाला चित्तभ्रम होताहे और कानकी जडमें सूजन तथा दर्द करे सो कर्णक होताहे सबरी चेष्टा बिगाडनेवाला अभिन्यास होताहे इस तरह तिस संनिपातके १३ भेद होतें हैं ॥ ७४ ॥

वृद्धे दोषे गतेऽग्नौ सति सकलपृथूपद्रवाः संनिपाताः
साध्यः कृच्छ्रस्ततोऽन्यो भवति लघुचतुःपंचषड्लक्षणैर्यः ।
तद्भेदः संतताख्यस्तदनु सततको नामतोऽन्येद्युरन्यो
नाम्नाऽथोक्तस्तृतीयाभिध इह गदितः किंच चातुर्थिकाख्यः॥

दोष वढजांय अग्नि मंद होजाय तब ये सब महासन्निपातज उपद्रव होयहैं. चार लक्षणयुक्त साध्य पांच चिन्हवारो कष्टसाध्य छे लक्षण मिलें तो असाध्य। वाके भेद संतताख्य दूसरो नाम वारो सततकहे। (दिनरातमे जो एकवार, आवे) सो, अन्येद्युष्क इकांतरा नामक हे, और जो एक दिन छोडके आवे सो तृतीयक नाम कर कह्योहे दो दिन छोडके आवे सो, कौई वाकों चातुर्थिकनामा कहैं हें ॥ ७५ ॥

वातोत्थः सप्तघस्रैरथ दशदिवसैः पित्ततो द्वादशाहैः
श्लेष्मोत्थो याति शांतिं रसरुधिरगतो यो ज्वरः संतताख्यः
सप्ताहाद्द्वादशाहैर्व्रजति शममयं दोषपाकाश्च धातोः
पाकाः केचित्तु तत्तद्द्विगुणदिवसतः शांतिनाशौ वदन्ति ७६

वातज ज्वर सातदिनमें और पित्तज ज्वर दशदिनमें कफज ज्वर बारहदिनमें शांत होंय हे और रसरुधिरगत जो ज्वर सो संतताख्य है वे सातदिन बारह दिन कर वात पित्त कफ दोषोंको पचावे या धातुको पचावे यह एकको मत है और कोइ दूने दिनमें इन दोषोंकी शांति और देहका नाश कहै हैं अर्थात् दोष पाकसे आरोग्यता और धातु पाकसे मृत्यु होयहे ॥ ७६ ॥

भुक्तस्यापि ज्वरेणाऽहितसमशनतो जातरोषो हि दोषो-
ऽल्पोपि प्रौढं करोति ज्वरमिह विषमं केपि भूतं तमाहुः ।
दोषो रक्तास्थितश्चेज्जनयति सततं स द्विकालप्रकोपम्
धत्तेहोरात्रमध्ये ह्यथ सपिशितगोहर्निशं चैककालम् ॥७७॥

ज्वर छूट जानेपर भी अति अहित भोजनसे फिर दोष कोप कर थोरेभी दोष अधिक ज्वरको करेहैं, कोइ मनुष्य उसे विषमज्वर कहे हैं, दोष रक्तमें स्थित होकर दिनरातके वीच दोसमयज्वरको

कोप करे सो सतत कहे और दिन रात्रिके वीच एकसमे आवेसो मांस गत हे के ॥ ७७ ॥

अन्येद्युष्कं प्रकुर्यादथ स विरचयेत्प्राप्तमेदास्तृतीयं
धत्ते स श्लेष्मपित्तात्रिकमनिलकफात्पृष्ठमूर्धोश्चदाहम् ।
दोषो मज्जस्थितश्चेद्विरचयति चतुर्थाभिधं सद्विघस्री-
मुलंघ्य स्यात्समीराच्छिरस इह कफाज्जंघयोश्चाविरास्ते ॥७८॥

इकांतरेको करे और सो ज्वर मेदामें प्राप्त तृतीयक होयहे और कफ पित्तसे और वायु कफसे पीठ और माथेमें दाह करे और मज्जामें स्थित होकर दोष चौथेया नामक दो दिन छोडके आने-वाला ज्वर पैदा करे वायुसे शिर और कफसे जंघाओंमें प्राप्त होयहे ॥ ७८ ॥

मज्जास्थिस्थश्चतुर्थाद्रचयति वियुतं पर्ययं स्यात्रिघस्री
घस्रद्वंद्वं समेति व्रजति दिनमथैकं च भूरिप्रतापः ।
घर्मांभोभिः प्रलिंपन्निव निखिलवपुर्गौरवेणाथ वायो-
र्मंदः शीतः प्रलेपी प्रतिदिवसमसौ दुश्चिकित्स्यः प्रलेपः ७९

मज्जा और हड्डीमें स्थित हो चातुर्थिक हो या तिजारी हो अथवा दो दिन रहे वा एक दिन रहे और बहुत संताप दे नित्य मंद (वेग) रहे शीत और गरमीसे देह लिपा और भारी वातसे रहे वो प्रलेपकज्वर वडे प्रतीकारसेभी आराम नही होताहे ॥ ७९ ॥

दैन्यं दाहो गुरुत्वारुचिवमथुतमः स्याज्ज्वरश्चेद्रसस्थो
दाहो मूर्च्छा प्रलापो रुधिरवमिमदभ्रांतयो रक्तगे स्युः ।
मांसस्थे ग्लानितृष्णाभ्रमदवथु तथा पिण्डिकोद्वेष्टनं स्यात्
स्वेदो दौर्गंध्यमूर्च्छा प्रलपनलपनग्लानि मेदोगते च ॥८०॥

दीनता दाह भारापन अरुचि बमनवा थुकथुकी अँधेरो आनो रसगतज्वरमें होयहे दाह मूर्च्छा बकवाद रक्तवमन मद भौंर रक्तगतमें होय हे । ग्लानी प्यास भ्रम वमन वा थुकथुकी पींडरी बँध जानो यें मांसगतमें होय हे और पसीना दुर्गंधि मूर्च्छा बकवाद मुखमैं ग्लानि मेदगतमें होय हे ॥ ८० ॥

अस्थिस्थोऽस्थिप्रभेदभ्रममदनिनदश्वासवेगांगघाता
मज्जस्थे मोहहिक्कादवथुशिशिरतामर्मघाता वमिश्च ।
शुक्रस्थे शोफमूर्च्छे मुहुरपि पतनं रेतसः स्तब्धतांगे
पंचत्वं चेति किंचिद्विषमगदयतेर्दूष्यगस्थानमुक्तम् ॥ ८१ ॥

हाडनमें ठहरनेसे हाडोंमें अति भडकन और मद बकवाद श्वास चलनों अंगपीडा, और मोह हिचकी वमन वा थुकथुकी ठंड लगनो मर्मपीडा और वमन, मज्जागतमें होयहे शुक्रस्थमें शोफ मूर्च्छा वार २ वीर्यपात अंगमें जकडन इन विषमरोगसे दूषित हो पूर्वोक्त स्थानको विगाड कभी मृत्यु करे है ॥ ८१ ॥

आदौ शीतं दधाते किल कफमरुतौ त्वग्गतौ पाप्मनोंते
पित्तं दाहं विधत्ते तदनु विनिमयाज्जायते वैपरीत्यम् ।
आगंतुः स्याच्चतुर्द्धा दुरधिगमतमिस्राऽभिघाताभिषंगौ
जातौ द्वौ चाभिशापादपर इह मतोन्योभिचारादुदीतः ८२

निश्चय कफवातसे त्वचामें प्राप्त ज्वर प्रथम शीत करे हे और पित्तसे दाह करे हे और याके विपरीतभावसे विपरीतता होयहे और आगंतुज ज्वर चार प्रकारको होय है दुरधिगमतमिस्र अभिघातज अभिषंगज और आभिशापज इसके पीछे अभिचारज कह्यो है ॥ ८२ ॥

दाहच्छेदक्षताद्यैः प्रथममभिवदंत्यत्र वातानुबंधो-
थाऽन्योभीशोकरोषौषधिगरलमनोजग्रहावेशतश्च ।
भीशोकोत्थे ज्वरे स्युः प्रलपनहृदयाऽस्थैर्यचिंतातिसारा
वायोः कोपश्च रोषोत्थित इह चलनं मूर्धरुक् पित्तकोपः ८३

दाहसे छेदसे घाव आदिसों पहले ज्वर वात विकार करे हे और भय शोक रोष औषध विष काम ग्रहावेश और भयशोकसे उठे ज्वरमें बकवाद हृदयमें अस्थिरता चिंता अतीसार वायुकोपसे और पित्तरोषितके कोपसे माथेमें दर्द और माथेका हिलाना होता है ८३

औषध्याघ्राणजाते क्षववमथुशिरोदुःखमूर्च्छादिरोगाः
क्ष्वेडोत्थे चातिसारो वदननिरसतादाहमूर्च्छात्रिदोषाः ।

कामोत्थे भ्रांतिदाहारतिमदबहुताधैर्यस्वप्ना भवन्ति
मर्त्त्यो रोदित्यकस्माद्वदति च विकृतः स त्रिदोषो ग्रहोत्थे ८४

औषधघ्राणसे पैदा ज्वरमें छींक वमन वा थुकथुकी शिरमें पीडा मूर्छा आदिक रोग होय हें और विषसे अतीसार मुखमें निरसता और दाह मूर्छा ये, होते हे और कामसे उठे ज्वरमें भ्रांति दाह पीडा मद बहुत अधैर्यता, अति सोना होता हे मनुष्य अकस्मात् रोवेलगे विकृत बोले वो त्रिदोष और ग्रहसे उठे ज्वरमें होय हे ॥ ८४ ॥

शापोत्थे चाभिचारोत्थित इह कुपिता स्यात् त्रिदोषी च पूर्वं
चेतः संतप्यतेंगं पुनरथ पिडिकाः स्फोटरूपाः सतर्षाः ।
जायंते दाहमूर्च्छारतय इह शिवाराधनैर्मंत्ररक्षा-
होमाद्यैस्तन्निवृत्तिर्भवति न भवति क्वापि कर्मातिरेकात् ८५

शापसे पैदामै और अभिचारसे पैदामे पूर्वमें त्रिदोष कुपित हो चित्तमें संताप अंगमें विस्फोट फुन्सी प्यासयुक्त दाह मूर्छा होय हें पीडा इससमे शिवजीका आराधन मंत्र और रक्षा होमादिसे निवृत्ति होय कभी अपने कर्मोंके अतियोगसे निवृत्त नहीं भीहोय है ॥ ८५ ॥

शारीरो मानसाख्यो लघुरलघुतरः स्यान्निरामश्च सामो
बाह्यांतर्वेगिनौ द्वौ भवत इह तथा प्राकृतो वैकृतश्च ।
साध्योऽसाध्यो द्विधा स क्रमत इति गदे मानसे स्यात्रिदोषा-
दादौ तापोऽथ तत्तन्मलविकृतिरतिप्रस्फुटांतर्न बाह्ये ॥८६॥

शारीरक मानसक छोटो बडो होय हे आरोग्य और सरोग बाहर भीतर वेग दोनो होय हें तैसे प्राकृत वैकृत और साध्य असाध्य क्रमसे दो भेद होय हें मानसरोगमें होते हें त्रिदोषसे आदिमें ताप और तिस २ दोषकी विकृती अति बाहर न भीतर फूटे ॥८६॥

स्वापस्तंभप्रसेकारुचिहृदयगुरुत्वाग्निमांद्याविपाका-
लस्यास्याशुद्धितंद्रारतिगरिमनस्तंभतापातिमूत्रैः ।
सामश्चास्मान्निरामस्त्वथ तिमिरतृषालापशूलक्रमैः स्या-
दंतर्वेगी प्रयुक्तः क्षवमलपवनस्तंभनैरन्यथान्यः ॥ ८७ ॥

निद्रा स्तंभ पसीना अरुचि हृदयभारी मंदाग्नि अजीर्ण आलस्य अशुद्धि तंद्रा पीडा मनकी स्थिरता संताप अतिमूत्र और रोगी और निरोगी तदनंतर तिमिर प्यास बकवाद शूल ग्लानि भीतर वेगको प्राप्त छीक पवन मलबंध होय हे ॥ ८७ ॥

छर्दिर्मूर्छातिसारारतिसकलवपुर्भेदविड्बंधतृष्णा-
हिक्का श्वासातिकासा इति वपुषि दशोपद्रवाः स्युर्ज्वरस्य ।
वातो वर्षासु पित्तं शरदि च सुरभौ श्लेष्मकः प्राकृतोथो
वेगस्तृष्णाप्रलापभ्रममलपतनं पच्यमाने ज्वरे स्यात् ॥८८॥

वमन मूर्छा अतीसार पीडा सर्वांगमें दरद मलबंध प्यास हिचकी श्वास अतिकास याप्रकार सब देहमें ज्वरके दश उपद्रव होय हैं वर्षामें वात शरदमें पित्त और वसंतमें कफ स्वाभाविक वेग करे हैं प्यास प्रलाप भ्रम मलपात ये पच्यमानज्वरमें होय हे ॥ ८८ ॥

सर्वैः स्याल्लक्षणैर्यो बलिमददमकः स ज्वरः प्राणहारी
शीघ्रं यश्चेन्द्रियाणां शमयति पटुतां यश्च गंभीरसंज्ञः ।
क्षीणो रूक्षो विसंज्ञो विकल इह बहिर्ग्लानिशीतार्दितोन्त-
स्तापा प्रस्विन्नकंठालिकमिह कथितः स्यादसाध्यो ज्वरार्तः ८९

जो सर्व लक्षणयुक्त बलवानको निर्बल करे वो ज्वर प्राणहारी हे जो शीघ्र इंद्रियादिकी चंचलता नाशकरे सो गंभीरनामा हे, क्षीण रूक्ष बेचेत विकल यामे बाहर ग्लानि भीतर शीत पीडा ताप पसीना ठंडसे कंठ रुकनो होय वो ज्वरपीडितरोगी असाध्य है ८९

दोषाणां कोपहानिर्वपुषि च लघुता स्याज्ज्वरस्यापि शांति-
र्वैमल्यं चेन्द्रियाणां पृथगिति गदितो लक्षणैर्दोषपाकः ।
निद्रानाशो गुरुत्वारुचिहृदयपृथुस्तंभभावोरतिश्च
हृन्नाभीष्वर्तयस्तृट्श्वसनबहुलता धातुपाकस्य चिह्नम् ॥९०॥
स्वेदः कंडूर्लघुत्वं क्षवथुरथ पृथक्पाटवं चेन्द्रियाणा-
मन्ने वांच्छास्यपाकः प्रकृतिरपवने रूक्षता विज्वरे स्यात् ।

दोषोंके कोपको नाश होनेसे देहमें लघुता ज्वरकी शांतिमें होवे हैं अलग २ इन्द्रियनकी निर्मलता ये लक्षणसे दोषपाकज्वर कह्यो हैं

और निद्रा न आनो भारापन अरुचि हृदयको भारीपन स्तंभको होनो पीडा और हृदय नाभिमें दर्द अंधेरो आनो प्यास श्वासकी अधिकता धातुपाक ज्वरके चिन्ह हैं ॥ ९० ॥ पसीना खुजरी हलकापन छींक और अलग २ इन्द्रियनकी चंचलता अन्नमें इच्छा मुखपाक प्रकृती वातका नाश चिकनापन ये उतरगये ज्वरमे होय हे ।

अथातीसारावलोकः ॥ १९ ॥

अत्यर्थस्निग्धरूक्षद्रवगुरुशिशिरासात्म्यभुक्तैरजीर्णै-
रम्बुक्रीडांबुदोषासवविषमरुषैः शोकवेगाभिघातैः ॥ ९१ ॥
संशम्याग्निं रसोऽधः सविडतिसरति प्रेरितो वायुनासौ
षोढा रोगोऽतिसारः पृथगथ मिलितैरामतश्चाथ रक्तात् ।
विड्भंगाध्माननाभीजठरगुदहृदातोदमस्याग्ररूपं
वायोर्वर्चोल्पमल्पं सरुगरुणमरं रूक्षमामं सशब्दम् ॥ ९२ ॥

अति चीकने रूक्ष पतले भारी अहित ठंडे भोजनसे अजीर्णसे जलक्रीडा और जलदोषसे आसव विषम क्रोधसे शोकके वेगसे अभिघातसे अग्निको नाश करके रसको विलोय वायुसे प्रेरित अति मल निकले, वो अतीसार रोग छे प्रकारको है, वात पित्त कफसे अलग २ और त्रिदोषसे आमसे और रक्तसे दस्त न होनो अफरा नाभि पेट गुदा हृदयमें दर्द याको पूर्वरूप हे । अधोवायु और मलको गमन अल्प २ पीडायुक्त शीघ्र रूखो आम शब्दयुक्त वातसे होय है ॥ ९२ ॥

पीतं शुभ्रं च रक्तं हरितरुचि सकृद्दाहमूर्च्छे च पित्तात्
शुक्लं सांद्रं च विस्रं सकलमिह कफाद्धृष्टरोमांचरोगी ।
नानावर्णः सपीडः समुदयजनितः सः सकृच्छोषकः स्यात्
बाष्पोष्मा शोकयुक्तो रुधिरमनुगतः सारयेद्रक्तवर्णम् ॥९३॥

पीलो अथवा सुफेद लाल हर्‍यो मल अरुचि दाह मूर्च्छा ये पित्तसें होय हे सुपेद गाढो फट्यो कफमिल्यो रोगीके रोमांच खडेसे हों सो कफसे होय हे और वेसेही अनेक वर्ण वारो पीडायुक्त

धुआंसहित गरम लोहू सो लाल मल निकले और एकदम मनुष्य सूख जाय सो रक्तातीसार हे ॥ ९३ ॥

अन्नाजीर्णाच्च धातूनखिलमलमपि क्षोभयंतस्त्रिदोषा-
न्नानावर्णं सशब्दं द्रवमुदरकटीं वेदनं सारयन्तः ।
वाराहस्नेहमेदःपलसलिलसदृग् जंबुमज्जाज्यकल्पं
चित्रं दुर्गन्धिचन्द्रं विडरति स महामोहदाहास्थिशूलम् ९४

अन्नके न पचवेसे और सब धातूनको सब दोष विगाडे हैं त्रिदोषसे नानावर्ण शब्दयुक्त पतलो पेटकमरमें पीडा करतो मल निकले, सूकरकी चर्बी मेद सो मांसजलसो ऐसेही जामुनकी मीगी सो घीसो विचित्र दुर्गंधि चमकदार मल पीडा महामोह दाह हड्डीमें शूलयुक्त निकले ॥ ९४ ॥

हिक्कामूर्च्छाप्रलापज्वरजठररुगाध्मानविण्मार्गपाकै-
श्चिह्नैरेतैरसाध्यो भवति स करपच्छोथकार्श्यांगभंगैः ।
वातो वृद्धो बलासं तुदति चिरचितं स्वाहितान्नाशनाच्च
स्वल्पं भूयो मलाक्तं प्रवहति स तदा वाहिका स्यात्प्रपूर्वा ९५
वाताच्छूलान्विता सा पृथुदवथुमती पित्ततः श्लेष्मतस्तु
श्लेष्माकारा त्रिलिंगा त्रिभिरपि च मलैर्लक्ष्मयुक्ता पुरावत् ।

हिचकी मूर्छा बकवाद ज्वर पेट पीडा अफरा गुदापाक हाथ पावमें शोथ दुर्बलता अंगभंग इन चिन्होंसे युक्त असाध्य होय हे, वातके बढनेसे पीडा, अति अपथ्य अन्नखानेसे बहुत दिनको इकट्ठो कफको प्रेरणाकर फिर अल्प दोष बहुत मलयुक्त गुदा बह्यो करे तब प्रवाहिका होय हे ॥ ९५ ॥ वो वातसे शूलयुक्त सो पित्तसे बहुत वमनवारी, कफसे कफाकार और तीन दोषसे तीनो लक्षणयुक्त पहलेकी भांति होयहे ।

अथ संग्रहण्यवलोकः ॥ २० ॥

नष्टे रोगेऽतिसारेऽप्यहितसमशनैर्मंदवह्नेः स भूयो
वह्निं दुष्टीकरोति ग्रहणिमतिगुरुः संग्रहण्यामयोयम् ॥९६॥

पक्षान्मासाद्दशाहादनुदिनमथवा सा विदुष्टा विमुंचेत्
यामं वर्चोऽथ पक्कं द्रवमथ निविडं भूरि चाल्पं सशूलम् ।
वातात्पित्तात्कफाच्च त्रिभिरपि च भवेत्सा चतुर्धात्र वायो-
र्दुःखादंतस्य पाकात्तृडपि परुषता कंठशोषो विषूची ॥९७॥

जब अतीसाररोग नाश होजाय और फिर अपथ्य भोजनसेही अग्नि मंद हो और अग्नि विगडके अति वहनेवारी बडीभारी संग्रहणी रोग होय है वो संग्रहणी बहुत विगडी भई पक्ष मास दश दिन और नित्यप्रति बहुतया अल्प शूलयुक्त मलको छोडे वात पित्तकफसे तीन प्रकारकी और त्रिदोषसे चौथी होयहे वो इस ग्रंथमें वातसे भीतर पकेके समान राध वहावे प्यास लगावे कठोर मल वहावे कंठ शुखावे हैजा करे ॥ ९७ ॥

कर्णध्वानो हृदर्तिर्वदनविरसता कार्श्यपार्श्वोरुपीडा-
ऽजीर्णे चाध्मानमन्ने पचति च भवति स्वास्थ्यमाशु प्रयुंक्ते ।
गुल्मप्लीहाभिशंका श्वसनकसनके चाथ पित्तेन वर्चो
नीलं पीतं च पूति द्रवमरुचितृषाच्छर्दितिक्तास्यता च ॥९८॥

वहरापन हृदयमें पीडा मुखमें विरसता दुर्बलता पांशू जाँघोंमें पीडा अजीर्ण और अफरा अन्नपचनेपर फिर शीघ्र अन्न पहुँचनेसे खस्थता होयहे गुल्म प्लीहकी शंका श्वास कास युक्त और पित्तसे मल नील पीत और दुर्गंधि पतरो अरुचि प्यास वमन और मुखमें कडुवापन ॥ ९८ ॥

मूर्च्छाम्लोद्गारदाहौ भ्रमिरथ कफतः स्निग्धसश्लेष्मवर्चो
वक्रे माधुर्यलेपो हृदयजठरयोर्गाढता वह्निमांद्यम् ।
नैर्बल्यं स्त्रीष्वहर्षः कफवमिमधुरोद्गारतान्नाविपाकाः
सर्वं लक्ष्म त्रिदोषे भवति जलघटीशब्दयुक्तं च वर्चः ॥९९॥

मूर्छा खट्टीडकार दाह भौर करे हे और कफसे चीकनो कफयुक्त मल मुखमें मीठो लेप हृदय पेटमें कठोरता मंदाग्नि दुर्बलता स्त्रीमें अरुचि कफकी वमन मीठी डकारआना अन्न न पचनो और ये सब लक्षण त्रिदोषमें होवे फिर गुदा शब्दयुक्त जल घडीके समान मलत्याग करेहे ॥ ९९ ॥

सुप्तिः शूलं सपार्श्वव्यथमनलहतिः शब्दमूर्च्छाप्रलापाः
शोथः शाखासु लिंगं गदितमिह बुधैर्मृत्यवे संग्रहण्याम् ।
अन्या सा संग्रहाद्या ग्रहणिरतिचिताद्रामवातात्सकष्टा-
दुर्विज्ञेया दिवामं विसृजति निशि वाथोभयोर्वा मुहुर्वा १००
क्षिप्रं मज्जाजलाभं द्रवमथ निबिडं श्वेतशोणं पिशंगं
पीतं वा शब्दपूर्वं सकटिरुगसकृत्प्राहुरामं पुरीषम् ॥

शून्यता शूल पाँशूमें व्यथा मंदाग्नि खेद मूर्छा वकवाद गुदामें शोथ ये चिन्ह संग्रहणीमें विद्वानोंनें मृत्युके कहे हें और सो सम्यक् प्रकार ग्रहण आदिसे ग्रहणी अति इकट्ठी आमवातसे कष्टयुक्त दुर्निवार आदि आम दिनरात वार २ पड़े ॥ १०० ॥ हालकी मज्जाके धोये जलसो पतलो मल सुफेद लाल हरो पीलो वा शब्द-युक्त कमरमें दर्दयुक्त ऐसो मल आमयुक्त कह्यो हे ।

अथार्शावलोकः ॥ २१ ॥

दोषैर्भिन्नैरभिन्नै रुधिरजसहजैश्चैवमर्शांसि षोढा
जायंतेऽपानमार्गे त्रिवलिषु पललस्यांकुरा दुर्निवाराः॥१०१॥

वात पित्त कफकरके सन्निपातसे रक्तसे जन्मसे ऐसे छे प्रकारको अर्श रोग गुदामार्गकी त्रिवलीमें मांसके दुर्निवार अंकुर होवे हें ॥ १०१ ॥

श्यावाः शोणाः कठोरा विशदसरुचयोऽन्योन्यमुज्जृंभितास्या
वक्राः खर्जूरबिंबीबदरफलनिभा नीपसिद्धार्थभासः ।
विष्टंभोद्गारहिध्माक्षवहृदवधृतिस्तोकविट्कृष्णरूक्ष-
त्वङ्मूत्रादित्वगुल्मारुचिसदनकराः पार्श्वकट्यादिपीडाः॥

कारे लाल कठोर श्वेत कांतवारे फटेमुखके टेढे खजूर बिम्बी और वेरफलसे कदंब वा सरसोंसे कबजियत डकार हिचकी छीक हृदयकी अधीरता अल्पपीडा मल त्वचा मूत्रादिक काले रूखे गुल्म अरुचिको स्थान करवेवारे पाशू कमर आदिमें पीडा ॥ १०२ ॥

वातात्पित्तात्तु पीताः शुकरसननिभा रक्तपावक्रतुल्याः
श्यामाः शोणाश्च विस्रास्तनुरुधिरवहा दाहपाकेऽतिदुःखाः।

मूर्च्छामोहभ्रमार्तिज्वरमदतृडतिस्वेददाः सामविट्त्वङ्-
नेत्रप्रस्वेदमूत्रेपि च नखमुखयोः पीततामादधानाः ॥१०३॥

वातसे और पित्तसे पीले तोताकी जीभसे जोकके मुखके समान काले और फटे रुधिर वहानेवाले दाह पाक अतिदुःख देवेवारे मूर्छा मोह भ्रम रोग ज्वर मद प्यास अति पसीना देनेवाले आमयुक्त विष्ठा त्वचा नेत्रमें पसीना मूत्र नख मुखमें पीलापन धारण करवेवारे होय हैं ॥ १०३ ॥

श्लेष्मस्थाः स्थूलमूलाः सितघनलघवः स्पर्शलाः पिच्छलास्ते
कंडूला गोस्तनाभा अपि पनसफलास्थ्याभवंशांकुराभाः ।
शुक्लत्वाद्यास्त्वगादिष्वपि बहुलवसावर्चसौ मेहकृच्छ्र-
क्लैब्याग्निक्षैण्यकासश्वसनविरुचिदाः स्रावभेदव्यपेताः १०४

कफसे पैदा मोटी जडवारे श्वेत कठोर छोटे वार २ हाथ लगवानेवारे भारी खुजरीयुक्त गौके स्तनसे और पनसफलकी मींगीसे बाँशके अंकुरसे सुफेद त्वचा आदिवारे और बहुत नीकनो मल प्रमेह मूत्रकृच्छ्र क्लीबता क्षीणाग्नि कास श्वास अरुचि देवेवारे स्रावभेदयुक्त ॥ १०४ ॥

सर्वैर्लिंगैस्त्रिदोषोत्थितमपि सहजं रक्तजातं तु पित्तो-
त्थार्शः प्लक्षप्ररोहप्रतिममथ समं चोच्चटाविद्रुमाभ्याम् ।
भेकाभं पीड्यतेसस्रुतिभिरतितरामुष्णविट्कः सकष्टं
क्वापि घ्राणास्यलिंगेष्वपि भवति च तद्रक्तजं रक्तवाहि १०५

सब लक्षणयुक्त सन्निपातज और सहज रक्तज पित्तसे पैदा प्लक्षप्ररोहसे और रत्ती मूँगासे मेंडकासे ये पीडादायक स्राव अति गरम मल कष्टयुक्त कभी नाक मुख लिंगमें होनेवारे रक्त वहावे तो रक्तज होय ॥ १०५ ॥

साध्या बाह्यांकुरा ये गुदवलिवलये मध्यमे कृच्छ्रसाध्या-
श्चान्तेऽसाध्याश्च कौला अपि कृशवपुषः शोफभाजो नरस्य ।
तृष्णाहृत्पार्श्वशूलैररुचिवमिमहामोहशोफातिसारैः
पाकेनापानमार्गस्य च नयति नरं दीर्घनिद्रामिहार्शः ॥१०६॥

गुदाकी अवलीमें बाहर अंकुर हों सो साध्य बीचमें हों सो कृच्छ्रसाध्य भीतर हों सो असाध्य, और कुलपरंपरासे कृश देह शोथवारे नरके प्यास हृदय पांशूमें शूल अरुचि वमन महामोह शोथ दस्त गुदापाकसे मनुष्यको ये अर्श दीर्घनिद्रा (मौंत) को प्राप्त करे हे ॥ १०६ ॥

अथाग्निरोगावलोकः ॥ २२ ॥

औदर्यो वीतिहोत्रः सृजति स विषमो वातरोगाननेकान्-
तैक्ष्ण्यं पित्तप्रभावाज्जनयति कफजान्मंदसंज्ञं करोति ।
अन्यो धन्यः समाख्यः पवनमनुगतः पित्तमग्निं च तीव्रं
कुर्यात्क्षीणं बलासं स च भवति तदा दुःसहो भस्मकाख्यः

उदरकी अग्नि विषम हो तौ अनेक वात रोगोंकों करे हे तीव्र हो तौ पित्त रोगोंको करे हे मंद संज्ञावाली कफ रोगोंको करे हे और समान अग्नि अर्थात् प्रकृतिके बराबर रहनेवाली धन्य हे अर्थात् रोग रहित रखनेवाली हे वातमें पित्त प्राप्त होके अग्निको बढायके और कफको घटायके बडो कठिन भस्मक नाम रोग पैदा करे हे ॥ १०७ ॥

अथाजीर्णावलोकः ॥ २३ ॥

वाताद्विष्टब्धमामं कफजनितमथो पित्ततस्तद्विदग्धम्
तुर्यं शेषाद्रसस्य प्रभवति च पुनः पंचमं घस्रपाकि ।
षष्ठं चाजीर्णयुक्तं प्रकृतिपरिगतं चेति षोढाप्यजीर्णम्
रोगानीकस्य मूलं भवति च विविधासात्म्यभुक्तेन जंतोः ॥

वातसे कबजियतवारो अजीर्ण होय हे, कफसे आमवारो होय हे और पित्तसे मलको शुखायवे वारो होय हे रसके न पचवेसो चोथो अजीर्ण होयहे और फिर एक दिनमे जिसका पाक हो सो पांचवो अजीर्ण हे और प्रकृतिसे संबंध रखनेवाला नित्य अजीर्ण रहे सो छठा अजीर्ण हे याप्रकार अजीर्ण रोग छे भ्रांतिको होवे हे नानाप्रकारके अपथ्य भोजनसे नरके अजीर्ण रोगकी सेनाकों मूल होवे है ॥ १०८ ॥

अत्यंभःपानतश्चाऽशनविषमतया स्वप्नवैषम्यभीति-
क्रोधैः शोकाश्रुचिंताकदशनरजनीजागरैर्भूरिभुक्तैः ।
वेगारोधाद्विरोधासमयविहरणक्षैण्यदैन्यातिलोभैः
प्राज्यैराज्यैश्च मांसैर्भवति गुरुतरैर्मत्स्यभोज्यैरजीर्णम् १०९

अतिजलपान और विषम भोजन होनेसे और विषमताके सोनेसे भय क्रोध शोक आंसू चिंता दुष्ट भोजन रातमें जगनेसे अतिभोजनसे वेग रोकनेसें विपरीत समय विहार करनेसे क्षीणतासे दीनतासे अतिलोभसे माखन घी मांस बडे मत्स्य खायवेसे अजीर्ण होय है ॥ १०९ ॥

उद्गारोऽम्लः सधूमो भ्रमवमितिमिरं मूत्रविट्संनिरोधो-
ऽतीसारश्चांगपीडा धरणिनिपतनं शूलमेतस्य रूपम् ।
ऊर्ध्वाधोवातरोधादलसक उदितः सालसे ह्यामकोष्ठे
दंडाख्यः स्यात्स एवं प्रसृतकरपदस्तब्धता दंडवच्चेत् ११०

धूंआयुक्त खट्टी डकारआनो और भौंर वमन तिमिर मूत्र मल रुकनो अतीसार और अंगपीडा पृथ्वीमें गिरनो शूल ये याको रूप है । ऊंचो नीचो वायु रुकनोसे अलसक पैदा होता हे निश्चय अलसयुक्त आम कोष्टमें फेले तव हाथ पाँव लकडीसे जकडे एसो दंडाजीर्ण होय हे ॥ ११० ॥

नोर्ध्वाधो याति भुक्तं यदि च कफमरुद्भ्यां विलंबी विदुष्टं
सूचीवक्त्रैरिवांगान्यनिल इह नुदेद्यत्र सा स्याद्विषूची ।
मूर्च्छातीसारशूलभ्रमवमथुतृषाकंपवैवर्ण्यजृंभा-
नेत्रश्वैत्यांगभंगैरपि कपिशतया दंतदंतच्छदानाम् ॥१११॥

जो भोजनऊपर न जाय और न नीचे जाय और कफ वातके विगडनेसे विलंवी होयहे सूईके मुखके समान अंगमें चुभेसो विषूची होय हे मूर्छा अतीसार शूल भौंर और वमन प्यास कंप विवर्णता उवासी श्वेत नेत्र अंगभंग और निश्चय दंत मसूठोंमें भूरापन ॥ १११ ॥

हृत्पीडादाहतंद्रारतिभिरतितरां मूत्रविट्संनिरोधे-
ऽन्ताजीर्णी जीवतीह क्षणमथ लघुभिर्लक्षणैस्तत्तथोह्यम् ।

हृदयपीडा दाह तंद्रा खेद अतिशय मूत्रमलको रुकनो इन कम चिन्हसे अजीर्णी क्षणमात्र जीवे अधिक लक्षणसे मरजाय।

अथ कृमिरोगावलोकः ॥ २४ ॥

द्वेधांतर्बाह्यभेदात्कृमय इह तथा ते चतुर्द्धा कफासृग्-
विट्प्रस्वेदोद्भवत्वान्नृवपुषि निखिला नामभिर्विंशतिः स्युः ॥

भीतर बाहरके भेदसे कृमि दो प्रकारके हैं तैसेही वो कफ रक्तमल पसीनासे होनेके कारण चारप्रकारके मनुष्यके देहमें सब नामोंसे वीस तरेके होय हैं ॥ ११२ ॥

अव्यायामैरजीर्णैर्मधुरतिलदधिक्षीरमाषाम्लसूक्तैः
पिष्टैर्दुष्टैश्च भोज्यैः पललचणदिवास्वप्नशाकैः कृमिः स्यात् ।
शूलश्वासातिसारज्वरवमथुगुदद्वारकंड्वास्ययुक्ताः
भ्रांतिच्छर्द्यग्निमांद्यं कृमिजमिति बुधा लक्षणं व्याहरंति ११३

विना महनतके अजीर्णसे मीठो तिल दही दूध उर्द खट्टो दुगंधी कठोर पीठीके दुष्टभोजन मांस चना आदिके खानेसे दिनमें सोनेसे शाक पत्र खानेसें कृमि होय हैं। शूल श्वास अतीसार ज्वर वमन गुदाके द्वारमें और मुखमें खुजरी सहित भौंर वमन मंदाग्नि ये लक्षण वैद्य कृमिसे पैदा कहे हैं ॥ ११३ ॥

ते सप्तामाशये स्युः पृथुकफजनुषोऽस्राशयेऽस्राच्च षट् ते
पंचांते विंशतिर्हि बहिरिति विविधास्तत्तदर्त्तिप्रदाश्च ।

वो सात आमाशयमें होय हैं और अति कफके होनेसे रक्तस्थानमें रक्तसे छे होवें हैं पाँच बाहर होवें हैं वीस भीतर होवें हैं। और ये तहाँ २ नाना प्रकारकी पीडा देवेवारे हैं ॥

अथ पांडुरोगावलोकः ॥ २५ ॥

देहः सश्वासकासश्वयथुवमियुतः पीतविण्मूत्रनेत्रः
क्षीणाग्निः क्षीणशुक्रो भवति गतबलः पांडुरोगी मनुष्यः ॥
ते स्युः पंचैव दोषैः पृथगथ मिलितैर्मृत्स्नया चात्र वायोः-
पीतश्यामारुणत्वं त्वचि च परुषतानाहकंपौ सतोदौ ।

पित्तात्पीतं त्वगादि ज्वरदहनतृषः श्लेष्मतः शुक्लभावो
मूत्रादेर्वक्त्रसेकः श्वयथुरलसता वह्निमांद्यं गुरुत्वम् ११५

पीलो अंग श्वास कास शोथ वमनसे युक्त मल मूत्र नेत्र पीले मंदाग्नि क्षीणवीर्य और बलहीन नर पांडुरोगी होयहै ॥ ११४ ॥ वो पांच प्रकारको होवें हे, वात पित्त कफके विकारसे और सन्निपातसे मट्टी खानेसे, तहाँ वायुसे पीत श्याम लाल त्वचामें कठोरता और अफरा कंप पीडायुक्त होवेहे, पित्तसे पीली त्वचा आदि ज्वर दाह प्यास, होवेहे कफसे मूत्रआदि सुफेद मुखमें पसीना शोथ आलस्य मंदाग्नि भारापन ॥ ११५ ॥

सर्वं लक्ष्म त्रिदोषे मृदपि च तुवरा मारुतं चोषरो वै
पित्तान्माधुर्ययुक्तं कफमनुवितनोत्येनमुत्क्रिश्य धातून् ।
गंडभ्रूनेत्रकूटप्रपदकरयुगे मेहने नाभिदेशे
शोथाढ्यः सातिसारः क्लमदवथुयुतः पीतदर्शी खरांगः ११६

त्रिदोषमें सब लक्षण होय हैं कषेली मट्टी खानेसे वात बिगडे हे खारीमट्टी खानेसे पित्त बिगडे हे मीठी मट्टी खानेसे कफ बढके धातूनको बिगाडे हे कपोल भौंह नेत्र भाग पगतली हथेली शिश्न टूँडीस्थलमें, शोथयुक्त अतीसारसहित ग्लानि वमन युक्त पीलो देखे और कठोर अंग ॥ ११६ ॥

तृष्णामूर्च्छावमीयुत् गतवति समये पांडुसंघातदर्शी
पांडुत्वग्दंतनेत्रो गतबलदहनः पांडुरोगी न जीवेत् ।
पित्तं दग्धास्रमांसे रचयति कुपितं कामलां पैत्तिकान्नैः
पाण्डुव्याधेर्हरिद्रानिभनयननखत्वक्शकृन्मूत्रभाजः ॥११७
कुंभाद्या सैव वृद्धा तरुणकपिहरिद्राभनेत्रा सपित्ता-
द्वातात्कांतो हलीमस्तदनु स च पृथूपद्रवैः पानकी स्यात् ।

प्यास मूर्छा वमन युक्त चलतेसमें पीलो समूह दीखे त्वचा दंत नेत्र पीले बलहीन दाहवालो पांडुरोगी नही जीवे, पित्तसे अति बिगडे रक्तमांस कोप करके कामला पैदा करे हे, पैत्तिक अन्नसे पांडुरोग हरदीसे नेत्र नख त्वचा मल मूत्र वारो होय हे

सो याके वढवेसे कुंभकामला होय है, पित्तसे लाल शरीर और हरदीसे नेत्र, वातसे हलीमक होय हे वाके पीछे बहुत उपद्रवसे पानकी होय है ॥

अथरक्तपित्तावलोकः ॥ २६ ॥

घर्मव्यायामशोकाध्वगमनसुरतैः क्षारकट्वम्लतीक्ष्णै-
र्दग्धं पित्तं च रक्तं दहति वहति तच्चाधरोर्ध्वैर्बिलैस्तैः ११८

घाम परिश्रम शोक रस्ता चलनो मैथुन क्षार कटु अम्ल तीक्ष्ण पदार्थोंके सेवनसे पित्तरक्तको विगाडके नीचे ऊपरके छिद्रोंसे रक्त दाहयुक्त वहावे हे ॥ ११८ ॥

निश्वासो धूमगंधो वमनमपि हिमाकांक्षता स्याग्ररूपम्
श्वेताभं श्लेष्मतस्तत्कपिशमनिलतः कृष्णशोणं च पित्तात् ।
मिश्रं चिह्नैः समस्तैरधरगमनिलादूर्ध्वगं श्लेष्मवंतम्-
वातश्लेष्मान्वितं चोभयगमनमिदं क्वापि लोमादिजं च ॥

श्वास रुकनो धूमगंध आनो वमन और ठंडकी इच्छा याको पूर्वरूप है. कफसे श्वेतकांतिवारो तैसेही वायुसे भूरो पित्तसे कारो लाल सर्व चिन्होंसे युक्त त्रिदोषी और वातसे अधोगामी और कफसे ऊर्ध्वगामी और वातकफसे दोनों मार्गगामी और कभी वालआदि खानेसे होनेवाला ॥ ११९ ॥

साध्यं स्यादेकदोषं गदितमिह बुधैर्याप्यमन्यद्द्विदोषं
दोषैः सर्वैरसाध्यं विगतहुतवहस्याद्द्विमार्गानुगं च ।
जंबालाभं सजंबूफलनिभमथवा पूयमेदोस्रकल्पं-
मांसप्रक्षालनांभःसममसितसकृन्नीलशोणप्रभं वा ॥ १२० ॥

पंडितजन एकदोषसे भयेको साध्य कहें, और द्विदोषीको याप्य, सर्व दोषसे होनेवालेको असाध्य, तथा मंदाग्नि वारेके दोनों मार्गसे वहें और काईसो जंबूफलसो अथवा पीव मेद रक्तसो मांसप्रक्षालनके जलसो कालो नीलो लाल प्रभावारो ॥ १२० ॥

नो साध्यं रक्तपित्तं यदि वमति नरः श्वासकासज्वरार्त्तः
क्षीणो दाही सपांडुः सवमथुरधृतिर्भूरितृष्णोऽतिपीडः ।

श्वासकास ज्वर पीडित क्षीणता दाह सहित पांडुरोग युक्त अधैर्यवान और प्याससे दुखी जो मनुष्य रक्तपित्त वमन करे सो साध्य नही हे ।

अथ राजयक्ष्मावलोकः ॥ २७ ॥

क्षैण्याद्वेगावरोधाद्विषमसमशनात्साहसाद्वातकोपात्
यक्ष्मा दोषः ससाध्यः सति पृथुलकफैस्तैरसाध्यः प्रकोपे १२१

क्षीणतासे वेग रोकनेसे विषम भोजनसे साहसके कार्य करनेसे वातकोपसे ये यक्ष्मरोग साध्य हैं, सो अतिकफकोपहोनेसे असाध्य हैं ॥ १२१ ॥

क्षीणे शुक्रेऽथवोच्चैरतिनिधुवनतो धातवः सर्व एव
क्षीयंते शुष्यतीह प्रतिदिवसमतो मानवो मंदवह्निः ।
रक्तष्ठीवी ज्वरार्त्तः कफवमिरलसो मूर्धहृत्पार्श्वपीडा-
मांसस्त्रीमद्यतृष्णाश्वसनकसनवान्विस्वरः शुक्लनेत्रः ॥१२२॥

अति शुक्र क्षीण होनेसे अति मैथुन करनेसे सब धातु क्षीण होय हे और या कारणसें मंदाग्निवारो नर नित्य सूखे रक्त थूके ज्वरपीडित कफ वमन करे आलसी माँथो हृदय पांशूमें पीडा मांस स्त्री मद्यमें इच्छा श्वास कासवारो स्वरहीन सुफेद नेत्र १२२

क्षीणाग्निः क्षीणचित्तो व्रजति च समये क्षीयमाणस्तृषावान्
पूत्यास्यः शुष्कतालुः कृशबलधिषणः पीनसी यक्ष्मणार्तः ।
स्वप्ने तं बर्हिशाखामृगकलभशुकाः शल्लकीध्वांक्षगृध्रा
भूयांसः क्लेशयंति द्रुममपि कलयेद्वातधूमावधूतम् ॥१२३॥

मंदाग्नि क्षीणचित्त होके फिर क्षीयमाणसमयमें प्याससे पीडित मुखमें दुर्गंधि तालुशोष कृश दुर्बलबुद्धिवारो पीनसी यक्ष्मायुक्त स्वप्नमे वानरके बच्चा मृग हाथीका बच्चा शूआ शेह कौआ गीध वार २ क्लेश देवें वृक्षमें चडे वायु धूमयुक्त देखे ॥ १२३ ॥

वातात्पार्श्वांसशूलं स्वरविकृतिरुजौ पित्ततश्चातिसारो-
सृग् वांतिर्दाह उच्चैः करचरणतले सज्वरोऽथो बलासात् ।

कंठध्वंसश्च कासोऽरुचिरपि च शिरः पूर्णतैकादशैता-
न्याहुर्लक्ष्माणि यक्ष्मामयिनि मुनिवराः षड्विधःस्यादथो वा

वातसे पाशूमें शूल स्वर बिगडनो पीडायुक्त, और पित्तसे अतीसार रक्तकी वमन अति हाथ पावके तलमें दाह, ज्वर युक्त और कफसे कंठनाश और कास अरुचि और शिरमें भारापन ये ग्यारह चिह्न मुनीनमें श्रेष्ठ यक्ष्मरोगीके कहे हैं और वो छैप्रकारकोही लक्षण होय हैं ॥ १२४ ॥

व्यायामाध्वव्यवायक्षतयुगलजराशोकतः शोषिणः स्यु-
र्धातूनां शोषणात्तु प्रतिदिनमिहतुः शोषमाहुर्मुनीन्द्राः ।
युक्तः शुक्रक्षयांकैरहरहरपि च क्षीयमाणोऽति पीतो
दग्धास्यःसंधिहृद्रुक्कृशतनुरलसः स्याद् व्यवायप्रशोषी १२५

मेहनत मार्गगमन मैथुन दोप्रकारके घावसे बुढापेसे शोकसे शोष होनेसे धातूनके शोपणसे प्रतिदिन मनुष्य शूखे सो मुनीन्द्र शोष कहे हैं वीर्यक्षययुक्त दिन २ क्षीयमाण अतिपीलो दाहयुक्त मुख संधी और हृदयमें पीडा कृश देह आलसयुक्त मैथुन शोषी होय है ॥ १२५ ॥

शुक्रक्षैण्यं विना यः प्रभवति च तथा पुत्रवित्तप्रियादे-
र्नाशादाशोषमानोऽनवरतसबलः शोकशोषी स उक्तः ।
मंदोऽतिस्वल्पबुद्धीन्द्रियरुचिरबलो भिन्नकांतिस्वरोऽथो-
निष्ठीवेच्छ्लेष्महीनं कृशतनुरनवः स्याज्जराशोषिसंज्ञः १२६

जो वीर्यक्षीण विना बलवारो पुत्र वित्त आदिके नाशके शोकसे एकदम शूखे वो शोकशोषी कह्यो है मंद अतिस्वल्पबुद्धि दुर्बल इन्द्रियवारो कांतिहीन फूटे कांसेके सो स्वर और कफहीन थूके कृश देहवारो बुड्ढो होय वो जराशोषी संज्ञावारो है ॥ १२६ ॥

स्रस्तांगो भृष्टरूक्षत्वगतिकृशमुखक्लोमकण्ठोऽध्वशोषी
स्याद्व्यायामप्रशोषी पृथुभिरिह नरः शोकशोषिस्वरूपैः ।
लिंगैर्वक्षःक्षतीयैः क्षतमिह च विना वेदनास्रक्षयाभ्या-
माहारस्यापि मांद्याद्व्रणवत उदितः शोष एष व्रणाढ्यः ॥

ढीलो अंग रूखी त्वचा अति कृश मुख और प्यासका स्थान कंठ शूखेसो मार्गशोषी होय हे और श्रमशोषी मनुष्य शोकशोषीके वहुतसे लक्षणवालो होय हे और रक्तके क्षीण होनेसे विना घावके पीडा हो हृदयमें घावसो मालूम होय और आहारकी अल्पतासे घावके समान शूखे सो व्रण शोषी कह्यो हे ॥ १२७ ॥

चंडं कोदंडदंडं सकृदपि च बलात्कर्षणो धावतो वा
धावंतौ वाहगावावनु च वलवता युध्यमानस्य पुंसा ।
वोढुर्वा भूरिभारस्य च झटिति परान्निघ्नतो नृत्यतो वा
तूर्णं दीर्घानदीर्घा तरत उरुतरोत्फालमातन्वतो वा ॥१२८॥

प्रचंड धनुषकी तांत जोरसे खेचे दौडे और दौडते घोडा तथा बैलको पकडे वलवान् नरसे युद्ध करे जल्दी बहुत बोझ उठावे दूसरेको मारे नृत्य करे शीघ्र बडे वृक्षपैं चढे कुदारीसे भूमि खोदै ॥

अत्युच्चैः पाठिनो वा नवरतसुरतासंगिनोऽल्पाशिनो वा
क्रूराण्यन्यानि कर्माण्यपि च जनयतो दाहि वक्षःक्षतःस्यात् ।
पीड्येते चास्य पार्श्वे कृशतरवपुषः क्षीणवीर्याग्निसत्व-
स्योच्चैर्जायेत दैन्यं ज्वरहृदयरुजा जातवेदो वधश्च ॥१२९॥

अति जोरसे पाठ करे अथवा सदा नई २ स्त्रीनसे संग करे अल्प भोजन करे और अनेक क्रूरकर्म करनेसे दाहकारक वक्षस्थलमें घाव होय हे मुख और पाँशूमें पीडा अतिकृश देह अग्नि सत्व वीर्य क्षीण ज्वर हृदयपीडा अग्निनाशसे दीनता होयहैं १२९

श्यावो दुष्टश्च पीतो ग्रथितइव बहुः पूतिगंधिर्बलासः
सास्रोऽभीक्ष्णं विनिर्यात्यपि मुखकुहरात्कासमानस्य तस्य ।
दीप्ताग्नेः पथ्यभाजोऽचिरसमयभवः सत्वयुक्तस्य कृच्छ्रो-
ऽसाध्यः सांवत्सरोऽसौ तदवधिरुदिता वासराणां सहस्रम्

कालो दुष्ट और पीलो गुथ्योसो अति दुर्गंधि कफ रक्तयुक्त निरंतर मुखकुहरसे खासनेके समय पडे सो असाध्यहे दीप्ताग्निवारे पथ्यभोजन करनेवारेकी थोडे दिनकी पैदा सत्ववारेकी कष्टसाध्य है वर्ष या हजार दिन ताकी अवधी है ॥ १३० ॥

कासश्वासौ पुरोगौ दुरधिगममहाव्याधयोऽष्टौ च योधाः
शोषाः पुत्रस्तथोच्चैरपिच गुरुतरा यस्य योषिद् विषूची ।
मंत्री मंदाग्निरुग्रः सहजसुरचरास्ते त्रिदोषाः सरोषा-
स्तृष्णावाहाधिरूढो हृदयभुवि नृणां राजते राजरोगः १३१

कास श्वास अंगुआ दुरधिगम महाआठ व्याधि जाके योद्धा शोष जाके बडे देहवारे पुत्र वडी और भारी विषूची जाकी स्त्री उग्र मंदाग्नि जाको कामदार कुपित त्रिदोष जाके मित्र हैं प्यासरूपी वाहनपें वेठ्यो मनुष्यके हृदयमें, आरूढ धरतीपैं राजरोग विराजेहैं ॥ १३१ ॥

अथ कासावलोकः ॥ २८ ॥

प्राणोन्वेतिह्युदानं मरुदिह कुपितः प्रेति वक्रात्सघोषः
कासोसौ पंचधा तैः पृथगथ रुधिराद् यक्ष्मतश्चात्र वातात् ।
श्यावं कासेत्सपार्श्वव्यथ इह विदलत्कांस्यवद्घोषपित्तात्
पीतः पीनः सदाहः कफत उरुसितो मंदवन्हिः सपाण्डुः १३२
शुष्कं वक्षः क्षतस्रात्सहृदयरुगथो यक्ष्मतो यक्ष्मचिन्हः
पूयास्रो नैष साध्यः प्रभवति बहुलोपद्रवस्त्वन्यथान्यः ।

प्राणवायु यहाँ उदानवायुयुक्त कुपित होके प्रेरणा करे तो मुखसें शब्द पैदा होय वो कास पाँच प्रकारको है, वातपित्तकफसे रक्तसे क्षयसे, तहाँ वायुसे कारो कफ खासे जब पांशूमें पीडायुत यहाँ फूटे कांसेकोसो शब्द होय हे, पित्तसे अति पीलो कफ कठिन दाहयुक्त होय हे, कफसे हृदयमें श्वेतता पांडुयुक्त मंदाग्नि होय हे ॥ १३२ ॥ रक्तसे पैदा कासमें वक्षस्थल सूखे और हृदयमें घाव और पीडा होय हे तथा क्षयजन्य कासमें क्षयीके लक्षण होयहैं । जिस कासमें अनेक उपद्रव होंय और रक्तपीव वहे सो साध्य नही होय हे ॥

अथहिक्कावलोकः ॥ २९ ॥

आस्यादुत्सन्निवांत्रादुदयति पवनोऽसात्म्यतो दीर्घघोषो
हिक्का सा पंचधास्यादुपरि हि तुदती हिक्कतीसान्नजा स्यात् ३३

युग्मैर्वेगैश्चिरेण प्रभवति यमले क्षुद्रिका जंतुमंदा
गंभीरा नाभिकष्टा चलयति महती मृत्युदा सर्वगात्रम् ।

आंतसे वात कुपित हो मुखसे दीर्घ शब्द पैदा करे सो हिचकी पांचप्रकारकी होय हैं अन्नसे पैदा ऊपरको व्यथा करे सो अन्नजा हिचकी होयहै ॥ १३३ ॥ दो दोषोंके वेगसे बहुत कालसे प्रकट या दो दो वार देरसे चलने वाली यमला होय हे और मंद मंद चलने वारी क्षुद्रा होय हे तथा नाभिसे कष्ट देके चले वो गंभीरा होय हे सब अंगोको कष्टदाता मृत्युकारक महती होय हे ॥

अथ श्वासावलोकः ॥ ३० ॥

वायुः स्रोतांसि रुध्वा कुपित उरुकफोऽनेकरुद्धश्च विष्वक्
यात्यायात्यूर्ध्वतोऽधो मुहुरयमुदितः पंचधा श्वासरोगः १३४

कुपित वात कफयुक्त होके चारों औरसे छिद्रोंको और हृदयको रोकके ऊपर नीचे वार २ आवे जाय यह श्वासरोग पाँच प्रकारको है ॥ १३४ ॥

दीर्घं श्रांतो हि मत्तर्षभ इव महता निश्वसत्यस्तसंज्ञः
श्वासेनाधोर्ध्वमूर्ध्वेण च न पुनरधो जंतुरस्ताखिलेहः ।
छिन्नोनार्धं नवार्तो मरुदुरुगमी स्यान्नसाध्यश्रमोत्थ-
क्षुद्रेह्यल्पः सरूक्षोऽद्द्युतितलघुमरुत्सैषसाध्योऽल्पबाधः १३५

जो अति श्रमित मतवारे बैलके समान श्वास लेके और ज्ञान नष्ट हो जाय वो महा श्वास होय है और जो श्वास नीचेसे ऊपर और ऊपरसे नीचे आवे संपूर्ण इंद्रियोंके व्यापार भंग करदेय सो ऊर्ध्व श्वास होयहे और जो रुक २ के श्वास लेवे नई २ हृदयमें वातपीडाकरे सो छिन्न श्वास साध्य नही हे और श्रमसे उठी सूखे पदार्थ खानेसे भई थोडी पीडा करने वारी अल्पवातयुक्त क्षुद्र श्वास यह साध्य होय हे ॥ १३५ ॥

मन्या मूर्धातिभारी श्वसिति तमकतस्तीव्रवेगं सहृद्रुक्
चण्डश्लेष्मैष याप्यः प्रतमक उदितः सैष पित्तोपसर्गात् ।

मन्यानाडी माथो अति भारी हृदयमें अतिवेगश्वास, और दर्द

अधिक कफ होनेसे याप्य पित्तके कारणसे प्रतमकश्वास होताहे ।

अथ स्वरभेदावलोकः ॥ ३१ ॥

अत्युच्चानल्पजल्पैरपि विषविषमाघातसंदूषणाद्यैः
क्रुद्धाः कुर्वंति दोषाः स्वरसरणिगता भेदमाशु स्वरस्य १३६
प्रत्येकं तैः समस्तैः क्षत उत पवनं मेदसस्तत्र पातात्-
षष्ठश्चांतर्गतस्तत्तदनुकृतियुतोऽसावसाध्यास्त्रयोंत्याः ।

अति ऊंचो बहुत बोलवेसे और विष तथा विपम चोट सो और दोषोंके विगडने सो स्वरस्थानमें प्राप्त वात पित्तकफ कुपित होके शीघ्र स्वरको तोड देवे हैं ॥ १३६ ॥

वात पित्तकफसे त्रिदोषसे घावसे अथवा वात भेदमें जायके मेदसे उन २ दोषोंके विकारोंके समान पीडा करनेवारो साध्य कष्टसाध्य असाध्य स्वररोग करेहे ।

अथारोचकावलोकः ॥ ३२ ॥

स्वाद्वप्यन्नं मुखेन स्वदत इति मतोऽरोचकः पंचधासौ
दोषैस्त्रेधा समूहादपर इह पुनः पंचमो रुग्भयादेः ॥१३७॥
द्वेषं स्मृत्वापि दृष्ट्वाऽशनमयमुदितो भक्तविद्वेषसंज्ञो
भक्तच्छन्दस्त्वनिच्छासरुष उरुभियो वाशने भक्तरोधात् ।

स्वाद अन्नकोभी मुखमें स्वाद नहीं लगे उसे अरोचक कहैं सो पाँचप्रकारको है, वात पित्त कफसे और त्रिदोषसे याके परें यहां फिर पाचमो पीडा भय आदिसे ॥ १३७ ॥ वैरसो यादसो देखवेसो यह भोजनप्रकट विद्वेषसंज्ञक है भोजनके रोकनेसेभी इच्छा नहीं होय क्रोध होय और हृदयमें भयसे वा भोजनमें अनिच्छासे अरोचक होयहै ।

अथ वमनावलोकः ॥ ३३ ॥

अन्नाद्यैश्छादयन्नाननमखिलतनू मर्दयन्दोष ऊर्ध्वं
यातीति च्छर्दिमूचुर्वमिरियमुदिता पंचधा तैःपृथक् त्रिः १३८

अन्न आदि सब देहके दोष मुखमें ऊपर आके अन्नको निकाले उसे छर्दि कहें और याहीको नाम वमन है वो पाँचतरेकी है वात-पित्तकफसे और त्रिदोषसे ॥ १३८ ॥

सर्वैस्तुर्याथ पंचम्यनुपशयकृमिप्रायबीभत्सगर्भाद्
वाताच्चु श्यावमल्पं वमति सरुगथो पित्ततस्तिक्तपीतम् ।
श्वेतं सांद्रं कफेन त्रितयमखिलतः स्यात्कृमेः शूलहृद्रुक्
या विट्पूयास्रमूत्रप्रतिनिधिरलघुः सेंदुरेषा न साध्या १३९

त्रिदोषसे चौथी और कृमिके उपद्रवसे पाँचभी प्राय डरावने-पदार्थ और गर्भके होनेसे होयहै वातसे काली थोडी पीडायुक्त वमन करे ओर पित्तसे कडुवी पीली और कफसे सुफेद गाढी तीनदोषसे सबलक्षणवारी होय हे कृमिसे शूल हृदयमें पीडा मल पीव रक्त मूत्र इनसी भारी चमकयुक्त साध्य नही होयहै ॥१३९॥

अथ तृषावलोकः ॥ ३४ ॥

पीत्वा पीत्वांबु तृप्तिं व्रजति न च पुनः कांक्षतेसौ तु तृष्णा
पित्ते सा तालुपातं रचयति समरुत्तद्भिदा सप्तधा स्यात् ।
दोषैर्भिन्नैः क्षतामक्षयसमशनतश्चात्र वाते हिमाद्भि-
र्वृद्धिः पित्ते तु शांतिः कफउरुजडतारुष्यसृङ्नाशरुग्भ्याम्

जल पीपीकेभी तृप्ति नहीं होय फिर जलकी इच्छा करे उसे प्यास कहे हैं. पित्तसे तलुआ लटकायदे पवनयुक्त ताके सात भेद होय हैं । वातपित्तकफसे घावसे आमसे क्षयसे भोजनसे तहाँ वातसे ठंडसे बढे पित्तसे घटे कफमें जडता रक्तकोपकी पीडासे तृषानाश होय हे ।

आमेऽसौ स्यात्त्रिदोषाक्षयतनुतरसक्षैण्यचिह्नाथ भुक्ते-
तिक्ताद्याधिक्यतस्तृट्कुशिमवमिमहोपद्रवैर्नैव साध्या ।

आमसे यह त्रिदोषसे क्षयसे देहमांस क्षीण इन चिह्नोंसे भोज-नके पीछे कडुए अधिक भोजनसे प्यास रोकनेसे उल्टीके अति उ-पद्रवयुक्त ये वमन साध्य नही है ।

अथ मूर्च्छावलोकः ॥ ३५ ॥

संज्ञास्रोतांसि रुध्वा यदि करणगणे ते विशंतीद्धपित्तान्-
मर्त्यो ध्वांतं तदैत्याधिभु पतति गतप्रज्ञ एषा तु मूर्च्छा १४१

संज्ञाछिद्रोंको रोकके जो इन्द्रियगणमें प्राप्त हो पित्तके बढनेसे नर अंधेरेको प्राप्त हो निर्बुद्धि धरतीपें गिरे सो मूर्च्छा ॥१४१॥

षोढासौ वातपित्तक्षतजकफविषान्मद्यतश्चात्र वातात्
ध्वान्तं यातीक्षमाणो वियदसितमथाग्निर्हरित्पीतरक्तम् ।
गंधाद्रक्तस्य चैवं ह्यथ कफजनितायां तु तत्राब्दयुक्तम्
तन्मिश्रं सन्निपातादथ विषजनुषि स्वप्नहृत्कंपमोहाः ॥१४२॥

ये मूर्च्छा वात पित्त घाव कफ विष मद्यसे छे प्रकारकी हे तहां वातसे देखते २ अंधेरो होजाय आकाश कारो दीखे अग्नि हरी पीली लाल दीखे लोहूकी गंधसे और ऐसेही कफसे पैदा वर्षमें भई होय तामे सुफेद दीखे सब लक्षण मिलें सो सन्निपातसे और विष देहमें होनेसे सोवे हृदयकंप मोह होय हे ॥ १४२ ॥

मद्योत्थायां तु सौम्यः प्रलपनलपनामोदयुक्तो नरः स्यात्
संन्यासः सर्वचेष्टोपरत इदमतस्तेन ना प्रेतकल्पः ।
मूर्च्छाध्वांतात्सपित्ताद्भ्रम इह तु रजः पित्तवातेन तंद्रा
श्लेष्मध्वांतानिलोत्था तिमिरकफभवा चापि निद्रा नराणाम्

नशासे पैदा मूर्च्छामें सौम्यता हो मुखसे वकवाद हर्षयुक्त नर होय हे सब चेष्टायुक्त संन्यास इनसे परे यहां कह्यो, तासो मनुष्य प्रेतकेसमान होय मूर्च्छा तिमिर पित्तसे भ्रम यहाँ चौथे पित्तवातसे तंद्रा कफसे अँधेरो वातसे तिमिर कफसे पैदा निश्चय मनुष्योंको निद्रा होय है ॥ १४३ ॥

अथ मदात्ययावलोकः ॥ ३६ ॥

युक्त्या मद्यं निपीतं भवति बहुगुणं ह्यन्यथा रोगदं स्यात्
दाहोल्लासस्तदीयः स्मृतिपचनसुखप्रीतिबुद्धिप्रदाता ।

अव्यक्तज्ञानचेष्टावचननिपतितोन्मादनिद्राकरोऽन्यः
स्तार्तीयीकस्त्वगम्यागमनबहुविधानर्हगुह्यप्रकाशी ॥ १४४॥

युक्तिसे मद्य पीयेतें अति गुण होय हे अयुक्तसे रोग देवेवारो होय हे प्रथम मदसे दाह आनंद स्मृति पचनमें सुख प्रीती अति बुद्धिको देवेवारो होयहे दूसरेसे ज्ञाननाश चेष्टानाश टूटे शब्द निकलें उन्माद निद्रा करवेवारो होयहे तीसरेमदसे न जानेकी जगे चलो जाय वहुत गुप्त वातको विस्तारसे प्रकट करवेवारो होयहे ॥

तुर्यो भूपातनष्टस्मृतिवमनमहामोहवैकल्यकारी
तस्याऽजीर्णे ज्वरार्त्तिश्रमवमनकफाध्मानदाहाद्विकारी ।
क्रुद्धे भीते सशोके श्रमसुरततृषासूग्रतापादि कुर्यात्
पानाद्येत्वात्ययांस्तश्चतुर इह गदान्दोषरूपस्वभावात् १४५

चौथेसे पृथ्वीपर गिरे नष्टस्मृति वमन महामोह विकलता करवेवारो ताके अजीर्णसे ज्वर श्रम कफ वमन अफरा दाहसे विकार हों क्रोधसें भयसे शोकसे श्रम मैथुन प्यास अति गरमी करे, पानादिकमें विशेषताको चतुर पुरुष यहां दोषरूप स्वभावसे कहें १४५

अथ दाहावलोकः ॥ ३७ ॥

पानोष्मा त्वक्प्रयातो रचयति विपुलं पित्तरक्ताभिवृद्धो
दाहं बाह्येति चांतःकथितमिह महद् भेषजं पित्तहारि ॥

नशापानकी गरमी त्वचामें प्राप्त हो पित्त रक्तसे वढके भीतर बाहर अति दाह करे उस दाहकी बडी औषध पित्त हरण कर्ता कही है ।

अथोन्मादावलोकः ॥ ३८ ॥

दुष्टैर्भुक्तैर्विरुद्धैरशुचिभिरपि च ब्राह्मणामर्त्यपूज्या
दोषैरुन्मार्गगास्ते मन उरु मदयंतीति तून्मादमाहुः ॥१४६॥

मनुष्यकर पूजित विप्रके कोपसे बुरे और विरुद्ध भोजनसे अपवित्रतासे दोष वातपित्तकफ मन मार्गमें प्राप्त होके हृदयको हर्षित करे सो उन्माद कह्यो है ॥ १४६ ॥

दोषैर्व्यस्तैः समस्तैरपि भवति विषाच्छोकतश्चेति षोढा
ऽथास्थाने हास्यगीताभिनयनयनवाग्वैकृताद्यस्य रूपम् ।
श्यावा पीता सिता विट् क्रमश इह मलैः सन्निपातेन मिश्रा
रक्ताक्षः क्षीणसत्वेन्द्रियरुचिरधृतिः श्यावक्त्रो विषात्स्यात्॥

बिगडे भये वातपित्तकफसे त्रिदोषसे और विषसे शोकसे उन्मादरोग छ प्रकारका होय है । असमय हास्य गीत नृत्य नयन वाणीको विगडनो याको रूप हैं, वातसे कारो पित्तसे पीलो कफसे सुफेद क्रमसे ऐसो मल होय यहां सन्निपातसे मल मिश्र-लक्षणवारो विषसे लालनेत्र सत्व इन्द्रिय कांति क्षीण अधैर्य-वारो कारो मुख होवे है ॥ १४७ ॥

स्त्र्यप्राप्तित्रासवित्ताद्यपहरणहतेर्मानसे स्याद्विकार-
स्तेन ब्रूते रहस्यं हसितमयमती रोदनं वा करोति ।
छायेवादर्शमाशु प्रविशति मनुजं पूर्णिमायां ग्रहान्त्यो
देवस्तेनातिपूतो ह्यवितथसुरवाग्ब्राह्मणेष्टः स्थिराक्षः १४८

स्त्री न मिलनेसे डरसे धनादिक चोरी होनेसे हत्यासे मनमें विकार होनेसे गुप्त वात कहे हसे वा अतिरुदन करे छायाकी भांति शीघ्र दर्पणमें पूर्णिमा और संक्रांतिको मनुष्यमें देव प्रवेश होनेसे अति पवित्र सत्यबोले विप्रप्रिय स्थिर नेत्र जिस्के हों उसे देव उन्माद कहनो ॥ १४८ ॥

दैत्याद् देवद्विजद्विड्वपुषि च महारोषवांश्चाथ मर्त्यो
गंधर्वोह्यष्टमीतः पुलिनवनगतो नृत्यगीतप्रियः स्यात् ।
यक्षास्ताम्राननाक्षः प्रतिपदुपगतः शीघ्रगोऽथो पितृभ्यः
प्राप्ते वै दर्शघस्रे रचयति स कुशः श्राद्धकर्मातिभक्तः १४९

दैत्योन्मादसे देव और विप्रसे द्वेष करे और दोनो संध्या समय मनुष्यके देहमे क्रोध होय गंधर्वोन्मादसे अष्टमीके दिन नदीके किनारे वनमे जायके नाचना गाना जिसे प्यारा होय यक्षोन्मा-दसे प्रतिपदा के दिन लाल मुखनेत्र और शीघ्रगामी होय पित्रो-न्मादसे अमावास्याके दिन पायके ही कुश युक्त अति भक्तिसे श्राद्ध कर्म करता होय ॥ १४९ ॥

नागान्नागोपमं संसरति भुवि सरुट् पंचमीतोह्यथासौ
रक्षस्तो रात्रिपातेपलरुधिरवसालालसः क्रोधनश्च ।
भूतप्राप्तात्पिशाचाद्बहुभुगतिकृशोऽपूतिसेवी वनस्थो-
ऽथ प्रासादात्पतेद्यो द्रुतिगतिरुरुदृक् फेनवामी न साध्यः ॥

नागोन्मादसे पंचमीको दिन पायके सर्पकी तरह पृथ्वीपर खूब सरके क्रोध सहित और राक्षसोन्मादसे रात्रिको पायके मांस रक्त चर्बी इनके लाभकी इच्छा करे और भूतोन्मादसे क्रोध करे तथा पिशाचोन्मादसे प्राप्त भयो बहुत खाय और अति दुर्बल रहे अपवित्र पदार्थोंका सेवन करनेवारो वनवासी महलसे गिरे शीघ्र गती क्रूर दृष्टी फेन वमन करे उसे भूतोन्मादीजाने साध्य नहीं है १५०

अथापस्मारावलोकः ॥ ३९ ॥

दोषाद्वेगात्प्रयाति स्मृतिरिह गदितापस्मृतिस्तैश्चतुर्धा
व्यस्तैः सर्वैस्तमोऽक्षिभ्रमवमनवपुर्वैकृताद्यस्य रूपम् ।
तेषां कोपस्य कालंसतत प्रतिपदे पक्षमासौ च सर्वो-
ऽथ क्षीणश्चञ्चलभ्रूरखिलमलमहामोहवान्ना न साध्यः १५१

विगडके उठे वातपित्तकफ ज्ञानबलको नष्ट कर अपस्मृति प्रकट करे सो चार प्रकारकी अज्ञानतासे कही है वात पित्तकफसे संनिपातसे नेत्रमें अंधेरो भोर वमन देह विगडनोसो इसको रूप है ताके कोपको काल नित्यप्रति और प्रतिपदा और सब तिथि क्षीणभाव चंचलनेत्र सर्व दोपी महामोहवारो साध्य नही है १५१

अथ वातरोगावलोकः ॥ ४० ॥

नामस्थानानुरूपान् रचयति पवनो हेतुना स्वस्य दुष्टो
व्याधीनुच्चैरशीतिं हुतभुगपि कफोऽसृक्कचोर्द्धक्रमेण ।
ऊरुस्तंभांगभंगौ ह्यतिमतिकृशतापार्श्वशूलांऽगभेदौ
पक्षाघातापतानासृजति बलहतिं गद्गदो मिन्मिनत्वम् १५२

अपने हेतुसे दुष्ट पवन नाम स्थानके अनुरूप बडी २ अस्सी व्याधियोंको पैदा करे हे पित्त और कफ रक्त ऊर्ध्व क्रम करके ऊरुस्तंभ अंगभंग अति कृशता पांशूमें शूल अंगपीडा पक्षाघात अपतानक और बलहानि गद्गद मिन्मिनत्व ॥ १५२ ॥

कार्श्यं कम्पोऽङ्गशोषः प्रलपनकठिनत्वेऽतिशुक्रप्रवृत्ति-
र्गंधासत्वांगशूले विरसवदनताऽध्मानतोदौ च कण्डूः ।
विश्वाची क्रोष्टुशीर्षं वदनकपिशिता क्षिप्रमूत्रत्वनिद्रा-
नाशौ च स्वेदतांशो वपुषि च गुरुता ज्ञायते नैव शब्दः ॥

कृशता कंप अंगशोष बकवाद कठोरता अति शुक्रप्रवृत्ति गंध न जाननो अंगशूल मुखमें विरसता अफरा पीडा और खुजरी विश्वाची क्रोष्टुशीर्ष मुखमें फीकापन जल्दी २ मूतनो निद्रानाश और पसीना कंधा और देहमें भारापन और शब्द न जागनो वहरापन ॥ १५३ ॥

रेतःकार्कश्यजृंभेऽप्यतिपवनगतिर्दृक्क्षयश्च प्रसुप्ति-
श्चित्तास्थैर्यं च रेतःक्षयमथ च कटिग्राहकुब्जौ च तोदौ ।
गृध्रस्याक्षेपतुल्योऽप्यथ हिमबहुता भीरुता वामनत्वं
जिह्वास्तंभापतंत्रौ तुवरवदनता पांडुता पादहर्षः ॥१५४॥

वीर्यकी कर्कशता उवासी और अति वायुगति दृष्टिक्षय और प्रसुप्ति चित्तमें अस्थिरता वीर्यक्षययुक्त और इसके पीछे कटिग्रह कूवडोपन गृध्रसी आक्षेप तूनी फिर बहुत ठंडता डरपोकता वामनत्व जिव्हास्तंभ अपतंत्रक मुखमें कषेलापन पांडुता पादहर्ष ॥

प्रत्याध्मानं च रौक्षं तदनु ननु हनुस्तंभता रोमहर्षो
मन्यास्तंभश्च मूर्द्धग्रहणमथ धनुस्तंभिता वातकंपः ।
खंजत्वाष्ठीलकाविड्ग्रहणमवयवभ्रंशदंडापतानौ
प्रत्यष्ठीलाऽपबाहुः स्फुरणमति तथा कूजनं चांत्रतस्तु १५५

प्रत्याध्मान और रूक्षता ताके पीछे निश्चय हनुस्तंभ रोमहर्ष मन्यास्तंभ और माथेको जकडनो और धनुस्तंभता वातकंप खंजत्व अष्ठीला मलग्रहण अवयवभ्रंश दंडापतानक प्रत्यष्ठीला अपबाहुक अतिस्फुरण तथा आंतोंका कूजना ॥ १५५ ॥

मूकत्वं बद्धविड्कत्वमपि किल शिरापूरणत्वं प्रलापः
पंगुत्वोद्गारतोक्ता तदनु निगदिता देहसंकोचता च ।
बाह्यायामोंतरायाम इह निगदितोऽन्यो व्रणायामसंगः
प्रत्यादिस्तूणिकश्चेदनिलजनिजुषोऽशीतिसंख्या गदाः स्युः ॥

मूकत्व मलका बंधना फिर निश्चय शिरापूरणत्व प्रलाप खंजत्व डकार तापीछे देहसंकोचता कही और बाह्ययाम अंतरायाम यहां फिर कही और व्रणायाम उत्संग प्रतूणी यह वातज अस्सी संख्यावाले रोग मनुष्यके होते हैं ॥ १५६ ॥

अथ पित्तरोगावलोकः ॥ ४१ ॥

धूमोद्गारोऽङ्गसादोऽपि च मुखकटुता लोहगंधास्यता च
स्वेदः स्रावोल्पनिद्रत्वमरतिरपि निःसत्वता कांतिहानिः ।
तेजोद्वेषो हिमेच्छाप्ययघनदरणं भिन्नविट्कत्वकोपौ
रक्तद्रावः क्लमांधे नखनयनवपुर्दंतविट्पीतता च ॥ १५७ ॥

डकारमें धूआआनो अंगपीडा फिर मुखमें चिरपिरापन और मुखमें लोहगंध आनो पसीनास्राव अल्पनिद्रा पीडा फिर दुर्बलता कांतिहानि तेजसे द्वेष ठंडकी इच्छारहनो और अदृढता फट्योमल क्रोध रक्त वहनो ग्लानि अंधता और नख नेत्र अंग द्रांत मलमें पीतता ॥ १५७ ॥

दौर्गंध्यं भ्रांत्यतृप्ती हरिदपघनता दाहता चोष्णता च
ध्वांतालोकोष्णविद्विट्ते तनुपरिपचनं कंठशोषास्यशोषौ ।
पीतालोकोऽल्पशुक्रत्वमपि च गदितं पीतमूत्राश्वमूत्रे
तूष्णोच्छ्वासत्वमेवं वपुषि च वदने पीतबिंबावलोकः ॥१५८॥

दुर्गंधि भ्रांति अतृप्ति हरितता दृढतानाश दाह और गरमी अँधरेमें देखनो गरमसे द्वेष देहमें पचे कंठशोष मुख सूखे पीलो देखे अल्पशुक्रत्व कह्यो और मूत्र पीलो घोडाके मूत्रसो गरम अति श्वास देह ओर मुखका गरम होना पीलो चंद्रसूर्यमंडल देखे १५८

अथ कफरोगावलोकः ॥ ४२ ॥

आलस्यं वक्त्रलेपो वपुषि च गुरुता तिक्तवांछोष्णवाञ्छे
तृप्तित्वं मंदधीत्वं वदनमधुरता सेकता चाननस्य ।
दिक्षु श्वेतावलोकः शयनबहुलता मूत्रशुक्लत्वजिह्वा-
शुक्लत्वे चांगशौक्ल्यं तदनु निगदिता दीधितिश्वेतता च ॥

रेतोभूयस्त्वमन्यत्किल मलबहुता घर्घरध्वानताऽन्या –
निश्चैतन्यं समूत्रप्रथिमकफभवा विंशतिर्व्याधयोऽमी ।

आलस्य मुखमें लेप और देहमें भारीपन कडुई ओर उष्णताकी इच्छातृप्तिता मंदबुद्धिता मुखमें मीठापन और मुखमें पसीना दिशामें सुफेदाई दीखे अतिनिद्रा मूत्रमें सुफेदाई जिव्हामें सुफेदता पीछे कही अंग सुफेदाई मंडल स्थान सुफेद दे खे ॥१५९॥ वीर्य और निश्चय मलकी अधिकता घर्घराट शब्द और अचैतन्यता बहुमूत्रता कफसे पैदा ये वीस रोग हैं ।

अथ पिडिकावलोकः ॥ ४३ ॥

उष्णत्वं पूतिगंधित्वमपि च गरिमा रक्तनिष्ठीवनत्वं
रक्तालोकोक्षिरक्तत्वमपि मुहुरसृङ्मंडलालोकनं च १६०
पीडापाकः शरीरे क्वचिदपि च मुहुर्मूत्रताऽन्या तथासृक्-
पिंडीका चेति रोगाः कुपितरुधिरतः स्युः शरीरेषु नृणाम् ।

गरमी दुर्गंधि और भारीपन थूकमें रक्त गिरे लाल दीखे लाल नेत्र और वैर २ लाल मंडल दीखे ॥१६०॥ पीडा अंगपाक और कभी २ वेर २ रक्त मूते ये फुन्सीरोग रक्तकोपसे नरके देहमें होय हैं ।

अथ वातरक्तावलोकः ॥ ४४ ॥

हस्त्यश्वोष्ट्रप्रयातस्य च भवति विदाह्यश्नतोऽन्नं समस्तं
रक्तं दुष्टं विदुष्टेन च युतमनिलेनेति तद्वातरक्तम् ॥१६१॥

हाथी घोडा ऊँटपें चलवेसे और संपूर्ण विदाहीअन्न जल, खानेसे विशेषदुष्ट वायुसे रक्त विगडे सो वातरक्त पैदा करे हे ॥ १६१ ॥

गंभीरोत्तानभेदाद्द्विविधमिदमिहांतर्गतं स्याद्गभीरं
ह्युत्तानं त्वक्पलस्थं गुरुलघु च पुरा चीयतेदः करांघ्र्योः ।
स्वेदोऽत्यर्थं न वा स्यादरुणिमगुरुता कण्डुतोदातिशूला-
स्तत्प्राग्रूपं स्वरूपं कथितमिह बुधैर्दाहसंकोचभावः ॥ १६२ ॥

गंभीर उत्तान भेदसे अनेक सो प्रकारको हैं भीतर गयो भयो होय सो गंभीर हे ऊंचो त्वचामांसमें स्थित भारी और हलको पह-

लेको इकठ्ठो हाथ पांवकी अंगुलीसे अतिपसीना वहे या न वहे अरुणता हलकापन खुजरी पीडा ताको पूर्वरूपहैं अतिशूल दाह संकोचभाव यह बुद्धिवानोंने ताको रूप कह्यो है ॥ १६२ ॥

स्पर्शाज्ञत्वं च कार्श्यं गरिमपरुषता मंडलं संधिपीडा
चैतत्कालक्रमेण प्रभवति च महत्कुष्ठमत्रापि दोषैः ।

स्पर्श न जाने और कृशता भारीपन कठोरता चकत्ता संधिमें पीडा यह कालके क्रमकरके पैदा होय है और इन दोषोंसे भारी कुष्ठभी होय है ॥

अथोरुस्तंभावलोकः ॥ ४५ ॥

वातः सश्लेष्ममेदाश्चिरसमयचितं पित्तमुत्सार्य सामं
युक्तश्चैषो बलेनोरुयुगलमुरुणा श्लेष्मणा पूरयित्वा ॥१६३॥

वातकफयुक्त मेद बहुतकालको इकठ्ठो आमयुक्त पित्तको उठायके घोंटुके ऊपरके भागकी हड्डी दोनी जांघोंमें कफ भर करके ॥

तौ स्तः स्तब्धौ तदानीं हिमगुरुसरुजौ स्नेहनं नात्र सात्म्यं
स्यादूरुस्तंभ एषः क्वचिदपि गदितस्त्वाढ्यवाताभिधानः ।

दोनो जांघ जकडजावे ता समेमें अतिठंडसे पीडासहित तहां चिकने पदार्थ गुणदायक नही होय हे इसे उरुस्तंभ कहें और कोइ २ आढ्यवातनामक कहें हैं ।

अथामवातावलोकः ॥ ४६ ॥

आमो वातेन नुन्नो व्रजति कफगृहान् दूषितोऽनेन तत्रा-
प्यत्यर्थं सोऽथ दुष्टो मरुदनलकफैरातनोत्यंगमर्दम् ॥१६४॥

वातसे प्रेरित आम कफके स्थानमें जाके तासो दुष्ट तहां फिर सो अतिविगड वातपित्तकफसे अंग जकडनको बढावे हो ॥१६४॥

मांद्यं वह्नेः कृशत्वं ज्वरहृदयगुरुत्वग्विपाकं च तृष्णां
दोष्णोः संध्युग्रपीडा श्वयथुकटिरुजे चामवातोऽयमुक्तः ।
वातोत्कर्षेण देशं यमिह स लभते वृश्चिकेणेव विद्धः
स स्यादत्यर्थपीडो ह्यथ हुतवहतो दाहरागौ कफात्तु १६५

मंदाग्नि कृशता ज्वर हृदय भारी त्वचापाक और प्यास हाथके

जोडमें अति पीडा शोथ ओर कमरमें दर्द याको नाम आमवात कह्यो हे । वातसे वढनेसे अंग देश वीछूके डंकलगेकेसो दुःख होय और अतिपीडा और पित्तमें प्राप्त होनेसे दाह राग और कफसे ॥ १६५ ॥

स्तैमित्यं चापि कंडूर्मिलितमिह भवेल्लक्षणं द्वित्रिदोषम्
ज्ञेयोऽसाध्यस्त्रिदोषः स तु सकलवपुःशोषरुग्वह्निमांद्यैः ।

गीले कपडासे वधेके समान जकडन और फिर खुजरी यह दो लक्षणयुक्त द्विदोषज और सब लक्षण जामें मिले सो त्रिदोषज हे सब देहको शुखाय पीडा मंदाग्नि देवेवारो असाध्य जाननो ।

अथ शूलावलोकः ॥ ४७ ॥

अष्टौ शूलानि दोषैः पृथगथ युगतः सन्निपातात्तथामात्
प्रायः सर्वेषु शूलेष्वनिल इह वली वच्मि चिह्नान्यमीषाम् ॥

शूल आठ प्रकारको है वातपित्त कफसे और द्वंद्वज सन्निपातसे तथा आमसे प्रायः सब शूलोंमें इहाँ वायुही बलवान् हे इन सवसे लक्षण कहें हैं ॥ १६६ ॥

अन्ने जीर्णे प्रदोषे रजनिपरिणतौ मेघकाले हिमर्त्तौ
बस्तौ हृत्पार्श्वपृष्ठे रचयति पवनः शूलमानाहतोदौ ।
मूर्च्छाप्रस्वेदमेहभ्रमदवथुतृषाकृन्निदाघेऽर्द्धरात्रे
मध्याह्ने प्रावृडंते विरचयति तु तन्नाभिदेशे च पित्तम् १६७

अन्नके अजीर्णमें संध्याके समे रातमें वर्षाकालमें हिमऋतुमें मूत्राशय हृदय पाँशू पीठमें वातसे शूल करे अफरा पीडा मूर्च्छा पसीना भोंर प्रमेह और बमनकी प्यास पैदा करे गीष्मऋतु आधीरातमें और मध्यान्हमें बर्षाके अंतमें वो नाभिदेशमें पित्तसे पैदा ॥ १६७ ॥

हृल्लासश्वासकासारुचिजठरशिरोगौरवास्यप्रसेकि
स्याच्छूलं श्लेष्मजातं सुरभिशिशिरयोः पार्श्वयोश्चापि कुक्षौ ।
द्वंद्वोत्थं द्वंद्वलिंगं सकलमलभवं सर्वलिंगं सशूलं
साध्यं साध्यो न दाहो वमिररुचितृषा कुक्षिहृद्गौरवानि १६८

हृदयकी चंचलता श्वास कास अरुचि पेट माथो भारी मुखमें पसीना होय ये शूलकफके पैदा हे । वसंत शिशिर दोनो ऋतुमें दोनो पांशू और फेर कूखमें शूल करे द्विदोषजमें दोचिन्ह सन्निपातमें सब लक्षणयुक्त समझनो । साधारणशूल साध्य और दाह वमन अरुचि प्यास कूख हृदयमें भारीपन सो शूल साध्य नहीं है ॥ १६८ ॥

मूर्च्छानाहौ गुरुत्वं तृडपि च कसनं वेदना श्वास हिक्का
वांतिभ्रांतिः कृशत्वं ज्वर इति मृतिदाः शूलजोपद्रवाः स्युः ।
श्लेष्मा स्थानात्स्खलित्वा मरुतमुपगतः पित्तदोषेण सार्कं
वृद्धो निर्माति शूलं पचति यदि शिते पक्तिशूलं तमाहुः १६९

मूर्च्छा अफरा भारीपन प्यास और कास वेदना स्वास हिचकी वमन भौंर कृशता ज्वर यह सब उपद्रव शूलसे पैदा मृत्यु देवेवारे होयहें । पित्तदोष युक्त कफ स्थानसे गिर करके वातमें प्राप्त हो वढके शूलको पैदा करे जो भोजन पचनेपर हो वाको पक्तिशूल कहे हैं ॥ १६९ ॥

बस्तौ नाभ्यां हृदंतः सजठरपिठरे पृष्ठवंशेऽथ कट्यां
सर्वेष्वेतेषु वा स्यादथ पुनरशितेऽन्नेथ जीर्णे प्रशाम्येत् ।
दोषैर्भिन्नैरभिन्नैरपि च युगलशो ह्युल्बणैकोल्बणैश्च
प्राहुर्भेदानमुष्य त्र्यधिकदशविधानुक्तलिंगान्मुनीन्द्राः १७०

मूत्राशय टूंडी हृदयके भीतर पेट पीठ पीठको हाड कमर सबमें पीडा होय और फिर अन्न पचेपें शांत हो वातपित्तकफसे और सन्निपातसे और द्वंद्वज उल्बणादि भेदसे इसके मुनीन्द्र तेरह नाम और चिन्ह कहे हें ॥ १७० ॥

जीर्णेऽजीर्णेऽशिते यत्समुदयति तथा पथ्यतोऽपथ्यतो वा
भुक्तेऽभुक्तेऽथवान्नद्रवमिति जगदुस्तज्जरत्पित्तमन्ये ।

पचवे न पचवे खानेसे जो पैदा करे अथवा तैसेही पथ्य अपथ्य भोजन अभोजनसे उसे अन्नद्रव कहैं और उसेही कोई जरत्पित्तभी कहैं हैं ।

अथोदावर्त्तावलोकः ॥ ४८ ॥

जृंभाविण्मूत्रवातक्षुतवमनतृषोद्गारनिद्राविधृत्यो-
दावर्त्तः स्यात्समस्तेन्द्रियविकलतया लिंगितो वातमुख्यः ७१

जँभाई विष्ठा मूत्र अधोवात भूँख वमन प्यास डकार निद्रा इनके रोकवेसे उदावर्त्त होयहै सब इन्द्रियनकी विकलतासे यामें वातमुख्य है ॥ १७१ ॥

जृंभाया रोधतः स्युर्गलशिरसि रुजो मूत्रतो बस्तिशूलं
विड्रोधादूर्ध्वविट्त्वं रुगपि च मरुतो वातजाता विकाराः।
छिक्कायाः पीनसोर्द्धे शिरसि च गुरुताऽथो वमेः शोफकंडूः
पांडूत्कोष्टास्तृषायाः सृजति च शयनस्यातितंद्रा सजृंभा ७२

उबासी रोकनेसे गलेमें और माथेमें पीडा होयहे मूत्र रोकनेसे मूत्राशयमें शूल होय मल रोकवेसे मुखसे विष्ठा वमन करे और वायुसे पैदा पीडा आदि विकार होयहैं छीक रोकवेसे पीनस आधेमाथेमें भारीपन और बमन रोकवेसे शोथ खुजरी पीलिया उत्कोठ प्यास रोकवेसे निद्रा और अतितंद्रा जँभाई पैदा करे १७२

रेतोरोधेऽण्डशोफोऽश्मरिरुगथ रुजोद्गाररोधेऽनिलोत्था
तृड् विड् वांतिश्च शूलक्लमकलित उदावर्तरोगी न साध्यः।
पक्कं वर्चोथ वामं चिरसमयचितं गंधवाहेन दुष्टं
नाबद्धं नैति कष्टादपि च यदि बहिः स्यात्तदानाहरोगः १७३

वीर्य रोकवेतें आंडोंमें सूजन पथरीरोगकी पीडा और डकार रोकवेसे वातसे पैदा प्यास विष्ठाकी वमन और शूल ग्लानि युक्त उदावर्तरोगी साध्य नही होयहे वातसे दुष्ट बहुत कालको इकट्ठो पक्यो मल अथवा नही पक्यो नही वँध्यो कष्टसे थोरो मल वाहर निकले तौ अफरा रोग करे है ॥ १७३ ॥

क्षैण्यैर्विण्मूत्ररोधैः कटिजठरहृदः स्तंभनैर्विड्विवांत्या
तृण्मूर्च्छाश्वासशूलैरिति भवति बहूपद्रवैर्नैष साध्यः।

क्षीणतासे मलमूत्र रोकवेसे कमर पेट हृदयके स्तंभनसे मल वांतिसे प्यास मूर्च्छा श्वास शूल ऐसे बहुत उपद्रवसे साध्य नही होय है।

अथ गुल्मावलोकः ॥ ४९ ॥

हृन्नाभ्योरंतराले चलमचलमथो दोषवृद्धिक्षयाढ्यं
ग्रंथिं मांसास्रमेदोविकृतिसमुदितं वर्त्तुलं गुल्ममाहुः १७४

हृदय नाभिके वीचमें चल अचल और दोषसे वढे घटे ऐसी मांस रक्त मेदके विकारसे पैदा गोल गाँठको गुल्म कहे है १७४

ते स्युः पंचैव दोषैः पृथगपि सकलैः पंचमो रक्तजातः
पार्श्वे हृन्नाभिबस्तिक्रमत इह मता भूमयः पंच चैषाम् ।
साध्यो नोद्गारभूयस्त्वमरुचिगुरुता विड्विबंधत्वमेषां
प्राग्रूपं चात्र वातान्मलमरुदगतिः स्थानपीडा विकल्पः १७५

वो पाँचही दोषसे होयहै वातपित्तकफसे और सन्निपातसे पाँचवो रक्तसे पाँशू हृदय नाभि मूत्राशय क्रमसे इहा कहे पाँचोके पाँचस्थान है डकार अरुचि भारीपन मलबंधसे यह साध्य नही है तहाँ वातसे पूर्वरूप मल और वायुको न फिरनो स्थान पीडा के समान जाने ॥ १७५ ॥

पित्तात्स्पर्शासहिष्णुर्व्रण इव सतृषादाहरोगज्वराढ्यः
श्लेष्णोत्थे तत्र शैत्यं श्वसनकसनहृल्लासकाठिन्यमाढ्यम् ।
सर्वं चिह्नं त्रिदोषादहितसमशनादामसूत्या ऋतौ वा
रक्तं संदूष्य वध्वा विरचयति मरुत्पित्तचिह्नं च गुल्मम् १७६

पित्तसे स्पर्श नही सह्यो जाय घावसरीकी प्यास दाहरोग ज्वरयुक्त होय है कफसे पैदा तहां शीतलता स्वास कास हृदय चलायमान कठोरतायुक्त ये सब चिन्ह हो वो त्रिदोषसे अहित भोजनसे कच्चो गर्भहोनेसे ऋतूमें रक्तको बिगाडके वाकी गांठ वाधके पैदाकरे वातपित्तके चिन्हवारो गुल्म पैदाकरे है ॥ १७६ ॥

शोफैर्हृन्नाभिहस्तांघ्रिषु वमिगुरुते तृड्ज्वरश्वासकासा-
तीसारारोचकार्तिकृशिमरुद्गुदयैर्गुल्मरोगी न साध्यः ।

हृदय नाभि हाथ पाँवमें सूजन वमन भारीपन प्यास ज्वर स्वास कास अतीसार अरुचि पीडा कृशता अधोवायुयुक्त गुदास्थान ऐसो गुल्म रोगी साध्य नही है ।

अथ हृद्रोगावलोकः ॥ ५० ॥

गुर्वत्युष्णाम्लतिक्ताशनचिरसुरताघातचिंताश्रमाद्यै-
र्हृद्रोगः पंचधा स्यात्पृथगथ मिलितैस्तैः कृमिभ्योपि चान्यः

भारी अतितृष्ण खट्टो कडवो भोजन करवेसो अतिमैथुनसे चोट लगवेसो चिंता श्रम आदि करवेसों हृदय रोग पाँच प्रकारको होयहे वातपित्तकफसे और सन्निपातसे और दूसरो कृमिसेभी ॥ १७७ ॥

वातात्पीडादि पित्ताद्वथुरथ कफाद्गौरवं सन्निपातान्
मिश्रं चिन्हं कृमिभ्यो नयनकपिशता चारुचिस्तोदउच्चैः ।

वातसे पीडा आदि पित्तसे वमन और कफसे भारीपन सन्निपातमे सब चिह्न मिलें और कृमिसे नेत्रमें भूरापन और अरुचि-जोरसे पीडा होयहे ।

अथ मूत्रकृच्छ्रावलोकः ॥ ५१ ॥

रूक्षव्यायामतीक्ष्णौषधसुरतसुरानूपमत्स्यातिपाना-
ज्जीर्णात्संरुध्य बस्तिं कुपिततममलान्मूत्रयंतीह कृच्छ्रात् १७८

रूखो खानेसो परिश्रम करनेसो तीक्ष्णऔषध सेवनसो मैथुन करवेसो मदिरा पीवेसो अनूपदेशके मत्स्य खानेसो अतिजल-पीवेसों अजीर्णसे मूत्रस्थानको रोकके अति कुपितदोषसे यहाँ इस योगमें कष्टमें मूते ॥ १७८ ॥

एतत्स्यान्मूत्रकृच्छ्रं पृथगथ सकलैस्तैः क्षताद्वेगरोधा-
च्छुक्रस्तंभाश्मरीभ्यामपि वपुषि नृणामष्टधा कष्टधात्री ।
कृच्छ्रे मेहेऽतिपीडां प्रथयति पवनो दाहमूर्च्छे तु पित्तम्
श्लेष्मा मंदत्वमग्नेरुजमपि गुरुतां सर्वलिंगं त्रिदोषी ॥१७९॥

यह मूत्रकृच्छ्र होयहे वातपित्तकफसे और सन्निपातसे घावसे वेग रोकनेसे वीर्य रोकनेसे अश्मरीसे निश्चय मनुष्यके देहमें आठ प्रकारके कष्टदेवेवारी कष्टसे मूते वातसे मूँतवेमें अति पीडा पित्तसे दाह मूर्च्छा कफसे मंदाग्निरोग और भारीपन और यह सब चिन्ह होय सो त्रिदोषी जाननो ॥ १७९ ॥

शल्यं वातस्य चिन्हं शकृदुदररुजाऽध्मानदाहाश्महेतून्
शुक्रं मूत्रं सशुक्रं रुजमपि महतीमश्मरीरूपमेतत् ।

शल्यज मूत्रकृच्छ्रमें वात कृच्छ्रके लक्षण और वार २ पेटमें दर्दअफरा पथरीवाले मूत्रकृच्छ्रमें होय हे शुक्रज मूत्रकृच्छ्रमें मूत्रके साथ वीर्य गिरे और पथरी सो अतिदर्द याको रूप हे ।

अथ मूत्राघातावलोकः ॥ ५२ ॥

मूत्राघातास्त्रयः स्युर्दश च किल मलैर्मूत्ररोधादिभिश्च
क्रुद्धो मूत्रेऽनिलश्चेच्चरति विगुणतः कुंडलीभूय मूत्रम् १८०

निश्चय मलमूत्र आदिके रोकनेसे मूत्राघात तेरह प्रकारका होयहे जब वात कोपकर विगडे तव वात कुण्डलीआदि मूत्ररोग होयहे ॥ १८० ॥

अल्पाद्यं वा सपीडं समुदयति तदा वातकुण्डल्यसौस्या-
दष्ठीलं मूत्ररोधि ह्युदयति मरुतः कुर्वतो वातरोधम् ।
यो रुन्ध्यान्मूत्रवेगं वदनमथ मरुत्तस्य बस्तेः पिधाय
क्रुद्धो मूत्रस्य रोधं रचयति स तदा वातबस्तिः स कष्टः १८१

जो थोडी वा अधिक पीडायुक्त पैदा होय सो यह वातकुंडली हे और मूत्रको रोकनेवारो वायुसे पैदा होय वातको रोके वो अष्ठीला है जो मूत्रके वेगको रोके और वात वा मूत्राशय के मुखको कुपित होके मूत्रको रोंके सो तहां वातबस्ति कष्टदायी हे ॥ १८१ ॥

मूत्रातीतस्तु मंदं मुहुरपि च मुहुर्मूत्रयेन्मेहयेद्वा
ऽपानं बस्तिव्यथाकृज्जठरमुपगतः कुक्षिमूत्रं करोति ।
बस्तौ नाले मणौ वा सरुगनिलवशाद्रक्तमूत्रं स्रवेच्चेन्-
मूत्रोत्संगोऽथ मूत्रक्षयमनिलकफात्सव्यथाद् दाहमाहुः१८२

मंद २ वार २ मूत्र मूते सो मूत्रातीत हे अपानवायु मूत्राशयमें पीडाकरे पेटमें प्राप्त हो कूंखसे मूत्र करे वो मूत्रजठर हे मूत्राशयकी नाल वा मणिमें पीडायुक्तवातसे लालमूत स्रवे सो मूत्रोत्संग है और वात कफसे व्यथायुक्त दाह होय सो मूत्रक्षय हे ॥ १८२ ॥

मूत्रग्रंथिः स्थिरोऽल्पोऽश्मरिवदतिरुजो बस्तिवक्त्रांतरस्थः
स्त्रीरंतुर्मूत्रितस्य प्रथयति पवनो मूत्रशुक्रं यथार्थम् ।
पित्तं बस्तिं सवातं दहदिव रचयेन्मूत्रमापीतरक्तं
कृच्छ्रात्स्यादुष्णवातो ह्यथ कफदहनो बस्तिभाजानिलेन ८३

स्थिर अल्प पथरीसी अतिपीडा मूत्राशयके मुखमें होय वो मूत्रग्रंथिहे स्त्रीसे मैथुन करकेसो वातसे जैसेकोतेसो वीर्यसो गाढो मूत्र उतारेताकों मूत्रशुक्र कहे हैं पित्त मूत्राशयमें वातयुक्त दाह यहां मूत्रको पीलो करे लाल कष्टसे मूत्र उतरे सो उष्णवात हे और मूत्राशयमें कफपित्तवातसे पैदा ॥ १८३ ॥

हन्येतासौतदाल्पारुणसितघनतो मूत्रतो मूत्रसादो
विज्ञेयो विड्विघातो यदि भवति शकृद्गंधि मूत्रं सकृच्छ्रम् ।
स्वस्थानध्वस्तबस्तेर्द्रुतगमनमुखैः कर्मभिर्मूत्रकोशः
पुंसोऽन्यत्र प्रयातः स्रवति लघु पुनः पीडितो भूरि मूत्रम् ८४

अल्पलाल सुपेद गाढौ मूते सो मूत्रासाद नाशकारी होय है मूत्रमें विष्टाकीसी गंधि आवे पीडाहोसो विड्विघात जाननो मूत्राशयको अपने स्थानसे मुख उलटा हो जाय जल्दीगमनसे पुरुषको मूत्रकोश और स्थानको चलो जाय थोरो वहे फिर पीडायुक्त वहुत मूत्र वहे ॥ १८४ ॥

शूलोदावर्त्तयुक्तः प्रभवति स तदा कुंडलं वस्तिपूर्वं
सोदावर्त्तातिशूलो भ्रमतिमिरमरुत्कुंडलीको न साध्यः ।

शूल अफरा युक्त हो तो बस्तिकुंडली कहनो अफरा अतिशूल भौंर अँधेरो हो तौ वातकुंडली वारोनर साध्य नही हे ।

अथाश्मर्यावलोकः ॥ ५३ ॥

दोषैः शुक्रेण वाश्मर्य्युदयति कफकृद्भक्षभाजां चतुर्द्धा-
मूत्राद्बस्तौ विशुष्का क्रमश इह गवां पित्ततो रोचनेव १८५

वीर्यके दोषसे कफकारी भोजनसे पथरी पैदा होयहे सो क्रमसे चारप्रकारकी हे यहां मूत्र मूत्राशयमें पित्तसे शूखे जो गौके रोचनसी ॥ १८५ ॥

हृन्नाभीसीवनीबस्तिषु तदतिशयाद्विर्विभागंतु मूत्रम्
मार्गे रुद्धे क्षते तु क्षतजरुगुदयो मूत्रमार्गे तया स्यात् ।
वाताचोदादिदाहाद्युदयति परतः श्लेष्मतो गौरवादि
प्रायो बालेष्ववालेषु तु भवति पुनः शुक्रजा शुक्ररोधात् ८६

हृदय नाभि सीवनी मूत्राशयमें पीडा ताके, अतिशयसे मूत्ररुक २ के मूते जब मार्ग रुकजावे तौ गुदा मूत्रमार्गमें घाव होयजायहे ताकरके मूत्रमार्गमें घावसे पीडाहो वातसे दर्द आदि पित्तसे दाह पैदा करे कफसे भारीपन आदि बहुधा बालकवृद्धको फिर शुक्र रोकनेसे शुक्रजा पथरी पैदा होय है ॥ १८६ ॥

स्थानाद् भ्रष्टं न यातं बहिरनिल इदं शुक्रमाशोष्य कुर्यान्
मुष्कांतस्तां च सा तु क्षपयति नितरां शुक्रमुत्पन्नमात्रा ॥

वीर्यस्थानसे भ्रष्ट होकै बाहर नही आवे वाकों वायु सुखाके वो वीर्य उत्पन्न मात्रसे आँडोके भीतर निरंतर जायहे ॥

अथ मेहावलोकः ॥ ५४ ॥

संदूष्य क्लेदमेदःपलमिह कुपितान्स्तानुदग्रप्रभावान्
साध्या याप्या असाध्याः समविषममहान्यत्क्रमात्ते हि सर्वे ॥

मेद रक्त इहाँ कुपित होके जो भारीप्रभाववाले प्रमेहको पैदाकरे वो साध्य कष्टसाध्य असाध्य क्रमसे उनको सम विषम महान् क्रमसे कहें ॥ १८७ ॥

देहे स्नैग्ध्यं विशेषात्करचरणतले दाहिता स्वादुतास्ये
तृष्णा मूत्राविलत्वं रदपृथुमलता पांडुता चाननस्य ॥
क्षुन्नाशो दुर्बलत्वं सुरतविमुखता संधिरुग्वैमनस्य-
मालस्यं कांतिहानिर्ग्रहणमपि मलस्याग्ररूपं प्रमेहे ॥ १८८ ॥

देहमें चीकनापन विशेषतासे हाथ पाँवके तलमें दाह मुखमें मीठापन प्यास मूत्र उतरवेमें देर दाँतपें बहुत मैल होना और मुखपें पीलापन क्षुधानाश दुर्बलता मैथुनमें अरुचि जोडोंमें पीडा मनको न लगनो आलस्य कांतिनाश मलको रुकनो यह प्रमेहमे पूर्वरूप होवे हैं ॥ १८८ ॥

इक्ष्वंभःसांद्रशुक्रासवहिमसिकतामंदपिष्टं च लाला
मांजिष्ठक्षारहारिद्रकरुधिरमथो नीलकालेवसेचः ।
मज्जा क्षौद्रं च तेषामिति पृथगभिधास्तत्तदाकारभावाः
प्रोक्ताः सर्वे क्रमेण स्फुटमिह तु भिदा मूत्रवर्णप्रभेदात् १८९

ईखजल सो गाढो शुक्र सो सुरा सो शीत सो रेत सो शनैः पीठीसो और लाला सो मंजिष्ठ सो क्षार सो हरदी सो रक्त सो और नीलो कालो वसा सो हाथीके मदसो मज्जा सो क्षौद्र सो तिनमें याप्रकार अलग २ नामसे उनके वर्णके आकारके भाववाले सर्व-भेद मूत्रके क्रम पूर्वक प्रकट कहेहैं ॥ १८९ ॥

मेहेत्स्वाद्विक्षुमेहीक्षुरसवदथ नव्याम्बुवद्वारिमेही
मूत्रं सांद्रं यदा पर्युषितमिह भवेत्सांद्रमेही तदा स्यात् ।
ऊर्ध्वं स्वच्छं सुरावत्किमपि घनमधस्तात्सुरामेह्यथैतत्
पिष्टाभं पिष्टमेही भृशशिशिरबहु स्वादुशीतप्रमेही ॥१९०॥

गाँडेके मीठे रससो मूते सो इक्षुमेही और नये मैले जलसो मूते सो वारिमेही जो मूत्र गाढो वासोसो होय सो सांद्रमेही हौ यहे ऊपर निर्मल मदिरा सो और नीचे गाढौ मूत्र होय सो सुरामेही हे पीठी सो मूते सो पिष्टमेही अतिठंडो बहुतमीठो मूते सो शीत-प्रमेही हे ॥ १९० ॥

शुक्राभं शुक्रमेही लघुलघु सततं मंदमेही च लाला-
मेही लालप्रतानप्रभमथ सिकतामेहिकः सैकताभम् ।
सक्षारं क्षारमेही जलमिव विमलं नीलमेही तु नीलम्
कालाभं कालमेही रजनिजलनिभं दाहि हारिद्रमेही ॥१९१॥

वीर्यसो मूते सो शुक्रमेही थोरो २ निरंतर मूते सो मंदमेही और लारकोसो तारदार होय सो लालामेही और रेतसो मूते सो सिक-तामेही क्षारयुक्त मूते सो क्षारमेही निर्मल जलसो मूते सो उदक-मेही नीलोमूते सो नीलमेही कालोसो मूते सो कालमेही जो हर-दीके जलसो दाहकारी मूते सो हारिद्रमेही ॥ १९१ ॥

विश्रं शोणं समंगासलिलमिव मुहुर्दाहि मांजिष्ठमेही-
रक्तं रक्तप्रमेही सरुजमथ वसामेहिकस्तद्वसाभम् ।
मज्जाभं मज्जमेही मधुरमतिविडं क्षौद्रवत्क्षौद्रमेही
दानाभं सालसीकं स्रवदनुसमयं पूतितद्धस्तिमेही ॥ १९२ ॥

फट्यो लाल मजीठके जलसो वार २ दाहकारी मूते सो मांजिष्ठमेही लाल मूते सो रक्तमेही और पीडायुक्त चर्वी सो मूते सो वसामेही हड्डीसो मूते सो मज्जमेही मीठो शहतसो मूते सो क्षौद्रमेही अलसीके दानेके जलसो स्रवे निरंतर दुर्गंधीसो हस्तिमेही १९२

रुग्बस्तौ मेहने चावदरणमुभयोर्मुष्कयोर्विड्विभंगो
मूर्च्छा दाहो ज्वरस्तृट् क्लम इह सहसोपद्रवाः पित्तमेहे ।
श्लेष्मोत्थे तत्र निद्रारुचिवमिकसनापङ्क्तयो वातजे तु
श्वासः कासौ हृदर्तिः शयनहतिरुदावर्त्तरुक्कंपशोषाः १९३

बस्तिमें पीडा मूततेसमें होय और दोनो आँडोंमें पीडा होय मलको भंग होय मूर्च्छा दाह ज्वर प्यास ग्लानी यह सहसा उपद्रव पित्तसे पैदा प्रमेहमें होय हे कफसे पैदामें तहां निद्रा अरुचि वमन कास पंक्तिशूल होय हे वातसे पैदामें श्वास कास हृदय पीडा निद्रा नाश अफरा पीडा कंप शोष होयहे ॥ १९३ ॥

मध्ये निम्नाधऊर्ध्वं प्रभवति पिडिका सा सरावी विदारी
कंदप्रख्या विदारी सरुगथ विनता स्थूलमूर्द्धाल्पमूला ।
सिद्धार्थाभा तु सर्षप्यथ लघुपिटिका संवृता स्थूलदेहा
पुत्रिण्युक्तालजी तु क्षतजवदरुणा विद्रधिस्तूक्तरूपः॥ १९४॥

प्रमेहके उपद्रवमें नीचे ऊपर फुन्सी होवे सरावसी सरावी विदारीकंदसी विदारी और पीडायुक्त विनता मोटो माथो छोटो मूल सरषोंसी सरषपी और छोटी फुन्सी संवृता बडी देहवारी पुत्रिणी घावकेसी लाल अलजी पहलेरूपसी विद्रधि होयहे ॥ १९४ ॥

कच्छप्युच्छाल्पकूर्माकृतिरथ सरुजा जालिनी मांसजाला
वैद्यैः प्रोक्ता मसूरप्रतिमतनु सरुग्दारणात् स्यान्मसूरी ।

जायंते मेहदेहेष्विति दश पिटिकाः संधिमर्मस्थलेषु
स्पष्टाः कष्टाः कलाभिस्त्वधिकरसमयोपेक्षणान्मेदसो वा १९५

साफ छोटे कच्छपसी आकृति वारीकच्छपी और पीडायुक्त मांस जालसी जालनी जो मसूरसी आकृतिवारी वैद्योंने कही फटनेकेसी पीडा होय सो मसूरी हे प्रमेहवालेके देहमें जोड मर्मस्थलमें होय हे प्रकट कष्टदाता अधिकरसमय मेदके उपेक्षासे होय हे ॥ १९५ ॥

अथ मेदावलोकः ॥ ५५ ॥

मेदोवक्षोजकुक्षिस्फिजि भवति चितं श्लेष्मलान्नैः प्रवृद्धम्
तत्तस्माल्लंबमानं तदवधृतगतिर्वर्द्धतेऽन्योऽन्यधातुः ।
कोष्ठे वातेपि वह्निं वहलयति तथैतौनु देहांतकौ स्तः
सत्वप्राणव्यवायैर्लघुभिरपि जनः स्याच्च कर्मासमर्थः ॥१९६॥

कफकारी अन्नसे पैदा वक्षस्थलमें कूंख कमरमें मेद वढे हे तासो पेट लटक जायहे तेसेही और २ धातु नही वढे हें अग्नि प्राप्त करनेवाली और अग्नि नाश करवेवारी वायु से कोष्ठ रुकजाय तौ पीछे देह नाश करे हे सत्व प्राण मैथुन छोडवेमें मनुष्य समर्थ होय हे ॥ १९६ ॥

अथोदरामयावलोकः ॥ ५६ ॥

वैवर्ण्यं कुक्षिशोफस्त्रिवलिहतिरुगाध्मानताऽबल्यदाहौ
कार्श्यं शाखासु शोफः करचरणगतो मूत्रविड्वातसंगः ।
तंद्रा चैतत्समस्तोदरजमभिहितं लक्ष्म तत्रानिलात्तु
श्यावारक्तत्वगाद्यं तदसितधमनीव्याप्तमापूर्णवातम् १९७

विवर्णता कूँखमें शोफ त्रिवलीमें नाश पीडा अफरा अबलता दाह कृशता शाखाओंमें हाथ पाँवमें प्राप्त शोफ मूत्र मल वायु रुके तंद्रा यह सब उदर रोगसे पैदा के लक्षण हे तहाँ वातसे काली लाल त्वचा आदि तेसेही काली पूर्ण वायुसे व्याप्त नसें होयहें ॥१९७॥

पित्तात्पीतं त्वगाद्यं सरुजमपि हरित्पीतताम्रैः शिराणाम्
वृन्दैर्व्याप्तं बलासात्त्वरुचिसितधमन्यादिसश्वासकासम् ।
दंतैर्दुष्टांगनाद्यैर्नखरकचविकार्यन्नपानादिभिस्तैः
क्रुद्धैर्दूषीविषाद्वा दधदखिलभवं लक्ष्म दूष्योदरं तत् ॥१९८॥

पित्तसे त्वचा आदि पीली पीडायुक्त हरी पीरी तामेसी नाडी-नके समूहसो व्याप्त होय हैं कफसे अरुचि सुफेद नसे आदि श्वास कासयुक्त होय हे दुष्टस्त्रीआदिकेदिये दाँत नख वाल विकारी अन्न-पान आदिसे कुपित दूषीविषसे पैदा तथा वातपित्तकफ तीनोंसे पैदाहो तौ दूष्योदरकें चिन्ह जानने ॥ १९८ ॥

दुष्टे मांसासृजी संरचयत उदरे वामतः प्लीहवृद्धिं
प्राहुः प्लीहोदरं तत्समुपचितमरुच्छ्लेष्मपित्तात्सतोदैः ।
नाड्यां रुद्धे पुरीषे त्रिभिरपि च मलैर्दूषितेऽपानमार्गात्
कृच्छ्रात्स्वल्पप्रवृत्तौ हृदय उपचितं दाहि बद्धोदरं स्यात् १९९

मांसरसके विगडनेसे पेटके वाये ओर प्लीह पैदाकर वढावे उसे प्लीहोदर कहें, यह अधिक पीडायुक्त वात पित्त कफ और त्रिदोषसे होय हे विष नाडीमें रुकवेते त्रिदोष विगडवेतें अपान-मार्ग दूषित हो दुःखसे मलकी अल्प अल्प प्रवृत्ति हो हृदयमें इकट्ठो दाह होय उसे बद्धोदर कहें ॥ १९९ ॥

शल्यं संप्राप्तमन्नैः सह महदुदरं नाभितोऽधः सतोदं
कुर्याद्भित्वांत्रमस्मात्स्रवति जलमिवाधः परिस्राविकं तत् ।
पीतस्नेहो विरिक्तः कृतवमनविधिः सानुवासो निरूही
स्नेहात्कोष्णांबु शीतं बहु पिबति यदा स्यात्तदांबूदरं तत् २००

अन्नमें शल्य चल्योजाय वो अधिकपीडायुक्त उदरमें नाभिके नीचे आंतकों काटके जलकीनाई विकारको नीचे की तरफ स्राव करे वो परिस्रावी हे चीकनो घृतादि पीयेतें दस्त रहित वमनविधि करेतें ओर अनुवासन व निरूहणसे स्नेहयुक्त गरम वा ठंडो बहुत जल पीवे तौ जलोदर होवे हे ॥ २०० ॥

स्निग्धं पानीयपूर्णं हृतिवदतिबृहत्पीडनात्कंपमानं
सध्वानं तुल्यनाभिप्रततसितहरित्पीतशोणाभराजि ।
शूनाक्षो जिह्मलिंगः कृशदहनतनुत्वक् सपार्श्वांसभंगः
शोफातीसारयुक्तो रुधिरविरहितो नोदरी जातु जीवेत् २०१

चीकनो जलकरके पूर्ण नाशक हे और वडी पीडासे कंपायमान निरंतर मार्गश्रमी सुफेद हरे पीले लाल से वाल आखे जीभ लिंग कृश हो देहमें जलन त्वचा पांशूमें कंधामें भंगता शोफ अतीसारयुक्त रक्तरहित एसो उदररोगी कभी नही जिये ॥ २०१ ॥

अथ शोफश्लीपदांत्रामयावलोकः ॥ ५७ ॥

क्रुद्धो वातोऽस्रपित्ते कफमपि धमनीर्वाह्यगा लंभयित्वो-
त्सेधं तैः साकमेव प्रथयति भिषजः शोफमेनं वदंति ।
प्रत्येकं तैर्द्विशश्च त्रिभिरपि विषतो घाततः स्युस्तथैतत्
भेदाः सोष्मानवस्युर्गरिमपुलकितोत्सेधनाडीकृशत्वात् २०२

कुपित वायु रक्तपित्त कफको बाहरकी शिरामें लेजाके गतिको रोक दोष युक्त त्वचासे ऊपर उठे याको वैद्य शोफ कहे हें । वातपित्तकफसे द्विदोषसे त्रिदोषसे और विषसे चोटसे तेसेही यह नौ भेदसे नौ प्रकारकी छोटी वाडीनको भारी करके होयहे ॥ २०२ ॥

रूक्षायामारुणत्वक् स भवति पवनात्स्निग्धसश्यामपीता-
रक्तत्वक् पित्ततोऽथो गुरुमृदुलसितत्वक् कफादन्य एतैः ।
शस्त्राद्याघातजोऽन्यः श्वयथुरथ विषाद्दुष्टकीटौषधादेः
पित्तप्रख्या विसर्पाकृतिरयमलघूपद्रवः स्यादसाध्यः ॥२०३॥

पवन विकारसे रूखी लाल त्वचा और पित्तसे काली चिकनी लाल पीली त्वचा होय हे और कफसे भारी नर्म सुफेद त्वचा होय हे और इन करके शस्त्र आदिकी चोटसे पैदा और शोथ और विषसे दुष्टकीट औषध आदिसे पित्तप्रख्याविसर्पकी आकृतिवारी यह बहुत उपद्रवसे असाध्य होय है ॥ २०३ ॥

मेदः श्लेष्मोत्थितं तत्प्रभवति पदयोः श्लीपदं शोफरूपं
नासाकर्णाक्षिहस्तांगुलिषु च रदने कुत्रचिन्मेहनेऽपि ।

दोषः क्रुद्धोऽण्डकोशौ विशति यदि तदा सप्तधा स्यात्कुरण्डो
वतादुरुग्दाहकंड्वोनलजकफजवद्रक्तमेदोभवौ च ॥ २०४ ॥

कफसे उठ्यो मेद तेसेही पांवमें सूजनरूपी श्लीपद करे है नाक कान नेत्र हाथकी अंगुली और दंत और कभी लिंगमेंभी कोइ जगे वर्तमान यह दोष कुपित होनेसे अंडकोशमे प्रवेश कुरंड सात प्रकारको होयहै वातसे पीडा पित्तसे दाह कफसे खुजरी रक्तसे पैदामे दाह और मेदसे पेदामे खुजरी होय हे ॥ २०४ ॥

रोधान्मूत्रस्य मौत्रो गतमुदयति तद्‌ हन्ति नेत्रांडजास्तु
क्षुद्रांत्रं वंक्षणं चेद्व्रजति निखिलरुक् पीडितेंत्रे तु दुष्टः ।

मूत्रके रोकवेसे मूत्रमें गई वातविकार पैदा होके दोनो अंडकोषोंमें पैदा हे छोटी आंत वंक्षणमें प्राप्त हो अति बिगडी आंतोंमें पीडा करे ।

अथ व्रणशोथावलोकः ॥ ५८ ॥

प्राग्रूपं स्याद्व्रणस्य श्वयथुरिह तनौ क्वापि षोढा स उक्तो
दोषैर्व्यस्तैः समस्तैरपि च रुधिरजागंतुजौ चात्र चिह्नम् २०५

घावके पूर्वरूपमें सूजन या देहमें कोइ जगे हो सो छै प्रकारकी कही है वात पित्त कफसे त्रिदोषसे और रक्तसे आगंतुजसे यह चिन्ह होय हें ॥ २०५ ॥

यत्प्रागुक्तं विशेषात्त्वथ विषममिहापच्यते गंधवाहात्
पित्ताच्छीघ्रं बलासाच्चिरमथ रुधिरागंतुजौ पित्तचिह्नौ ।
मंदोष्मत्वाल्पशोफत्वमतिकठिनता त्वक् सवर्णत्वपीडा-
मंदत्वं चाल्पघुत्वं कथितमिह बुधैरामशोथस्य लिंगम् ॥२०६॥

जाको पहले विशेषतासे यहा कहे हों और वायुसे विषम पके पित्तसे शीघ्र पके कफसे बहुत दिनमें पके और रक्तसे तथा आगंतुजमें पित्तकेसे चिन्ह होय हें छोडीगरम अल्प शोथ अति कठोरता त्वचामें सवर्णता मंद पीडा या अतिपीडा यह पंडितोंने कची शोथके चिन्ह कहे हें ॥ २०६ ॥

तत्रास्यात्पच्यमानेरुगतिकठिनता चापि सौवर्ण्यसूची
निःस्तोदत्वाग्निपातत्वमतनुतनुतातृड्ज्वरारोचकत्वम्।
पक्के पीडाविरामः श्वयथुरपि लघुः शोफकंडूबलित्वं
पाकेऽस्रस्य त्वगुर्वी रुगतिकठिनता कंडुसावर्ण्यतोदम् २०७

तहां पकेहुए शोथमें पीडा अति कठोरता और निश्चय सूईसी चुभनो पीडारहित जलन हलकामन प्यास ज्वर अरुचि और पके (फूटे) शोथमें पीडा हटनो और शोथ घटनो खुजरी सलवट पडनो रक्तपाकमें भारीपीडा अति कठोरता खुजरी सवर्णता दर्द ॥ २०७ ॥

पाकः पित्तं विना न प्रभवति न रुजा गंधवाहं न पूयः
श्लेष्माणं तेन कुप्यत्यनुवपुपरुषः पाककाले त्रिदोषी।

वायु विना पीडा नही होय है पित्त विना पके वढे नही है कफ बिना पीव नही पडे ताकारण कोप पीछे देहके पाकसमय तीनही दोषसे होय हे।

अथ सद्योव्रणभग्नव्रणनाडीव्रणावलोकः ॥५९॥

शारीरागंतुभेदाद्व्रण इह कथितो द्विप्रकारोत्र पूर्वो
दोषैरन्यस्तु शस्त्रादिभिरथ पवनात्स्तब्धता चातिपीडा २०८

शारीरक आगंतुज भेदसे व्रण यहां दो प्रकारको कह्यो है यहां पहलो शारीरक व्रण और वातपित्तकफसे और आगंतुज शस्त्र आदि लगनेसे और वातसे अतिपीडा जकडन ॥ २०८ ॥

तीक्ष्णस्पर्शश्च तोदः स्रुतिरगुरुरपि श्यावता पित्ततस्तु
क्लेदस्तृण्मेहदाहज्वरदरणमसृक् पूयपूतित्वमुच्चैः।
स्निग्धत्वं स्याद्बलासाल्लघुरुगलघुता पांडुता क्लेदमांद्यं
रक्तात्पित्ताकृतिः स्यादलघुररुणभाद्द्वित्रिजा द्वित्रिलिंगाः॥

तीक्ष्ण स्पर्श और पीडा वहनो हलकापन और कालापन होयहे और पित्तसे ग्लानि प्यास मेह दाह ज्वर फटनो रक्त दुर्गंधित होनो अति पीव होयहे कफसे चीकनापन थोडी पीडा अति

पांडुता ग्लानि मंदाग्नि होयहे रक्तसे पित्तके चिन्ह और भारी लालता होय हे दो दोषसे दो के और त्रिदोषसे तीनोंके लक्षण होय हें ॥ २०९ ॥

त्वङ्मांसोत्थश्च यूनः सुखकृतविषमे चापि काले सुवृद्धे-
र्युक्तो नोपद्रवैर्यः पृथगचिरभवः सौख्यसाध्यो व्रणः स्यात् ।
कैश्चिच्चिह्नैर्व्रणो यो भवति निगदितैः प्राग्द्विदोषः स याप्यः
सर्वैस्तैर्यः सुयुक्तो रुधिरकफमरुत्पित्तरुग्भागसाध्यः ॥२१०॥

त्वचा मांससे उठ्यो और जवानकों सुखकार्यमें और विषमकालसे अति बढ्यो और उपद्रवयुक्त नही एक दोषसे थोडे कालको पैदा घाव सुखसाध्य होय है कहे भये कोई चिन्हसे वो व्रण द्विदोषी होय सो याप्य है सब लक्षणोंसे युक्त रक्त कफ वात पित्त तिनकरके पीडावारो रोगी असाध्य है ॥ २१० ॥

दुष्टासृक्पूतिपूयश्चिरसमयभवः पूत्यसृक्क्लेददिग्ध-
श्चोत्संगी शीर्णमांसः पृथगतिरतिरुग्दुष्टसंज्ञोन्यथाऽन्यः ।
यस्य प्रांते कपोताकृतिरपि विगतक्लेदपीडः स्थिरश्च
रक्तं मध्यं प्ररोहत्ययमिति निगदे तुल्यदेहं तु रूढम् ॥२११॥

बिगडा रक्त दुर्गंधी पीव वहे बहुत कालको पैदा दुर्गंधी रक्त ग्लानि युक्त और ऊंचो फट्यो मांस भारी गति अति पीडा होय वो दुष्ट व्रण हे और प्रकारको नही व्रण जाको प्रांत कपोताकृति और सो क्लेदरहित स्थिर लालमध्यमें चढे यह या प्रकार कहे देहतुल्य रूढ रहे ॥ २११ ॥

मद्येनोर्वाऽज्यपुष्पाम्बुजमलयरुहैश्चंपकैर्ये च गंधाः
किंवा ये दिव्यगंधा असुमृदवयवे तेप्यसाध्या व्रणाः स्युः ।
छिन्नं भिन्नं तु विद्धं क्षतमपि च तथा पेषितं घृष्टमाभिः
संज्ञाभिः षड्विधं तन्मुनिभिरभिहितं सामिसद्योव्रणं च २१२

मदिरा भू घी कमल पुष्प चंदन चंपाकीसी गंध आवे औरभी दिव्य माटीकीसी गंध धारणसे असाध्य व्रण होय है, छिन्न भिन्न विद्ध घाव तथा पिस्यो घिस्यो इन संज्ञासे मुनीने निरंतर सद्यव्रण छे प्रकारको कह्यो है ॥ २१२ ॥

तिर्यक् छिन्ने समं वा व्रण इह तु भवेदायतो गात्रपाती
छिन्नाख्यो भिन्नसंज्ञस्त्विपुलगुडमुखैराशयेषु क्षतेषु ।
भित्त्वायं निःसृतं यद्बहिरिति लघु वा सूक्ष्मशल्यं विनांतः
कोष्ठं विद्धाभिधानं जगुरिह भिषजः किंचिदुच्छूनितं वा २१३

तिरछो छिन्न समघाव यहां होय देरसे गातपात करे यह छिन्ननामा है वडो गोल मुखसे आशयनमें घाव होनेसे इनको भेद न करके जो बाहर निकले छोटो बडो शल्यके बिना कोठेके भीतर कुछ उंचो भिवे उसे वैद्य विद्ध कहें ॥ २१३ ॥

नातिच्छिन्नं न भिन्नं तदुभयजनितैर्लक्षणैर्युक्तमेनं
प्राहुर्वैद्याः क्षताख्यं पृथुमथ हननोत्पीडनैः पिच्चिताख्यम् ।
अंगं यत्त्वग्विहीनं प्रभवति महतो घर्षणाद्वाततो वा-
सौघृष्टाख्यः सशल्यं त्वतिकपिशमहद्बुद्बुदाभं सपीडम् २१४

न अति छिन्न न भिन्न सो इन दोनो लक्षणोंसे युक्त पैदा वैद्योंने क्षतनामक कहा है और मारनेकी पीडासे भारी पिच्चित नामक है अति खुजायवेसों चोटसों जो अंग त्वचाहीन होजाय उस्का नाम घृष्ट है, शल्ययुक्त अति भूरो बुद्बुदासो पीडायुक्त उसे शल्य कहें ॥ २१४ ॥

शीतोच्छ्वासोऽरुणाख्यः शिशिरकरपदो भ्रांतिमूर्च्छाप्रलापी
साध्मानोऽश्यावक्त्रो ज्वररुगभियुतो याति सद्योव्रणीतः ।
मेहोन्मादौ विसर्पश्वसनकसनतृट्छर्दिहिध्मातिसार-
पीडायुक्पक्षघातज्वरदहनहनुस्तंभनं चापतानः ॥ २१५ ॥

ठंडोऊपर श्वास चले सो अरुणाख्य हे हाथ पांवमे ठंड भ्रांति मूर्छा वकवाद अफरायुक्त कालो मुख ज्वरपीडासहित सद्योव्रण-वालो या भावको प्राप्त होवे है, प्रमेह उन्माद विसर्प श्वास कास प्यास वमन हिचकी अतीसार पीडायुक्त पक्षाघात ज्वर दाह हनु-स्तंभ और अपतानक ॥ २१५ ॥

नाडीस्तंभो व्रणानामिति नृषु विषमाः षोडशोपद्रवाः स्यु-
र्भग्नं संध्यस्थिभेदाद्द्विविधमिह किमप्यालपाम्यस्य चिह्नम् ।

सामान्यात्संधिभग्नस्य तु भवति रुजा कुंचनाकुंचनेषु
स्पर्शद्वेषश्च शोथस्तृडरुचिशयनध्वंससंतापमोहाः ॥२१६॥

नाडीस्तंभ यह व्रणी नरनको विषम सोलह उपद्रव होय हैं भग्न टूट्यो जोड हड्डीभिदवेसे नानाप्रकारको व्रणस्थानको लक्षण है सामान्यतासे संधिभग्नको आकुंचन और कुंचन करके पीडा होवेहे स्पर्शमें द्वेष और शोथ प्यास अरुचि निद्रानाश संताप मोह ॥ २१६ ॥

भग्ने त्वस्थिप्रकांडे चटवडितिवचः पाणिना पीडिते स्या-
दुच्चैस्तोदः सशूलस्त्वचि च कपिशिता पूर्वचिह्नानि चापि ।
अज्ञानादामबुद्ध्या श्वयथुरथ चिरोपेक्षितो यः सुपक्व-
स्तस्यांतर्याति भित्त्वा निजनिलयमसृग्वाँश्च नाडीं च पूयः॥

अस्थि शाखा टूटेंभयसे मछरीपकरवेके काँटेके समान हाथमें पीडा होय जोरसो तोद शूलयुक्त त्वचामें पीलापन यह पूर्व चिन्ह है अज्ञानसे कच्चीबुद्धिसे शोथ और बहुतराहसे जो सुपक्व भीतर भेदन करे और स्वयं वातरक्त सो नाडीपूय होवे हे ॥ २१७ ॥

सः स्यान्नाडीव्रणोसौ पृथगथ सकलैस्तैस्तथा शल्यतोऽन्यः
प्रायः सर्वेप्यसाध्यास्तदपि च कथितोऽसाध्य एव त्रिदोषः ।
गंभीरः शूरताढ्यश्चिरसमयभवः पूयपानीयरक्त-
स्रावी सोष्णं सफेनं कथित इह सरुक् यस्तु नाडीव्रणः सः॥

यह नाडीव्रण वातपित्तकफसे और त्रिदोषसे और शल्यसे और यह सब प्रायः असाध्य है ताके पीछे कहे इन लक्षण करके हीन सो साध्य है गंभीरशूरतासे अतिसमयसे भयो पीव पानीय रक्तस्रावयुक्त गरम फेनयुक्त ऐसी पीडायुक्त सो नाडीव्रण कहा है ॥ २१८ ॥

लक्ष्म प्राग्वत् त्रिदोष्यादुरधिगमतमं शल्यजातं तु फेन-
क्लेदासृग्वाहि पूतिः पलभवमतिरुग्दाहिशल्याध्वतोदः ।

पूर्ववत् लक्षण त्रिदोषके है दुरधिगमतमशल्यसे पैदा फेन ग्लानि रक्त वहे दुर्गंधी मांससे पैदा अतिपीडा दाह शल्यमार्गमें पीडा ।

अथ भगंदरावलोकः ॥ ६० ॥

मूलाधारे व्रणो यः स च भवति भगव्याधिरस्मादनेक-
च्छिद्राद्रेतो मलश्च स्रवति यदि शतापोनको वातजः स्यात् ॥

गुदामें जो व्रण होवे वो भगंदर अनेक प्रकारको है छेदसे वीर्य और मल वहे सो वातसे पैदा शतपोनक होय है ॥ २१९ ॥

उष्ट्रग्रीवस्तु पित्तादरुणिमदरणापायुमार्गे प्रयातं
श्लेष्मोत्थे मंदपीडास्रुतिरमृदुसितः स्यात्परिस्राविकाख्यः ।
जंबूकावर्तकोन्यस्त्रिभिरपि च मलैस्तद्वदुन्मार्गकाख्यो-
न्यश्चोपेक्षापराणां गुदमथ दलयेऽदंगिनामंगनाशी ॥२२०॥

पित्तसे गुदामें लाल विनामुखवारी फुन्सी ऊंटकी नाडके समान होवे सो उष्ट्रग्रीव कहे कफसे पैदा मंद पीडा कठोर स्वेतवहे एसो परिस्रावी नाम कहे और जो तीनदोषसे होय सो जंबूकावर्त हे जो स्त्रीइच्छाके परायणके गुदाके मार्गको विदारण कर मार्ग करे सो उन्मार्गी नामक अंगनाश करवेवारो है ॥ २२० ॥

प्रायः सर्वेप्यसाध्या यदपि भगभवा व्याधयो व्याधिभाजां
तत्राप्युन्मार्गगो यस्त्रिभिरपि च मलैर्नैव साध्यावमूस्तः ।

प्रायः भगंदर रोग सगरेही असाध्य हे जो कामसे भयो व्याधी रोगीको तीनोही मलसे भयो उन्मार्गी साध्य नही है ।

अथ गलगंडगंडमालाऽपचीग्रंथ्यर्बुदावलोकः ६१

आहुर्गंडं गलोत्थं गलपदवदनं गंडमालानुगंडै-
र्भूयोभिः कंठकक्षाहृदयसमुदितैः स्याच्चिरस्थापचीयम् २२१

गाल और गलेमें होय सो गलगंड हे और गालगलेमें पांयमे मुखके पास होय सो गंडमाला होय हे कंठ काँख हृदयमें होय और वहुत कालतक रहे सो अपची हे ॥ २२१ ॥

ग्रंथिः कुत्राप्यपाकी वपुषि पृथुपलग्रंथिरूपोथ तद्वत्
स्यात्संपाकोऽर्बुदं तैस्त्रिभिरपि रुधिरान्मेदसोऽन्यैश्च बीजैः ।

बडी अपकनेवारी मांसकी गांठ कहींभी अंगमें होय सो ग्रंथी जाननी ताके समान पकवेवारी त्रिदोषसे पैदा अर्बुदसो रक्त-मेदसे होवे है ।

अथ विद्रध्यवलोकः ॥ ६२ ॥

दोषाः शोकं सदाहं चिरमभिजनयन्यापयन्त्यर्तिकां वा
वल्मीकाभां प्रदूष्य त्वचमतनुमसृङ्मांसमेदांस्यपक्कः ॥२२२

अस्थिमें प्राप्त होके दोष त्वचा याके पीछे रक्त मांस मेदको दूषित करके दाहयुक्त लंबो गोल विलेसरीको अपक सूजन बहुत-कालतक रहवेवारो पैदा करे ॥ २२२ ॥

पक्को वा विद्रधिस्तैः पृथगथ मिलितैरस्रतश्च क्षतेन
प्राग्वच्चिह्नान्यमीषां रुधिरजनिरयं त्वंगनांगेव बोध्यः ।
बस्तौ नाभ्यां च कुक्षौ हृदय इह गुदे वृक्कयोर्वंक्षणे च
प्लीह्नि क्लोम्नि प्रकुर्वंत्यमुमतिकुपिता विद्रधिं गुल्मवर्तम् २२३

अथवा पकवेवारी वो विद्रधी रोग वातपित्तकफसे और संनि-पातसे रुधिरसे और घावसे छ प्रकारकी हे पहले सरीखे इनके चिह्न है रुधिरसे पैदा ये योनिसरीको जाननो मूत्राशय नाभि कूख हृदय गुदा रसाशय वगल प्लीह पेटको जलाशय इनमें कुपित हो गुल्मके समान गोल विद्रधी करे है ॥ २२३ ॥

बस्तौ चेदेष कृच्छ्रं जनयति जठराटोपहिक्के तु नाभ्यां
कुक्षौ वातप्रकोपं हृदि कसनमथ क्लोम्नि दीर्घामुदन्याम् ।
पायौ वातावरोधं यकृति तु कसनं वृक्कयोः पार्श्वबंधं
प्लीह्नि श्वासावरोधं ग्रहणमपि कटीपृष्ठयोर्वंक्षणोत्थः ॥२२४॥

ये वस्तिमें हो तौ मूत्रकृच्छ्र पैदा करे, नाभिमें हो तौ पेट फुलावे, हिचकी करे कूँखमे हो तौ वातकोप करे हृदयमें हो तौ कास करे और उदरके जलाशयमें हो तो अति प्यास बढावे गुदामें हो तो वायु रोके, हृदयमें हो तो कास करे रसाशयमें हो तो पार्श्व-

बंध करे, प्लीहामें हो तो श्वास रोके, कटिग्रहण करे और बगल में पैदा हो तौ पृष्ठमें पीडा करे ॥ २२४ ॥

नाभेरूर्ध्वं तु पक्कं स्रवति स तु परिष्टादधस्तादधश्चेन्
नाद्यं साध्यं च मर्मोत्थितमपि निगदंत्येनमन्यन्तु कृच्छ्रम् ।

नाभिके ऊपर पक्योसो ऊपर अथवा नीचे वहे आदिको साध्य नही है और मर्ममें पैदा और दूसरेको कष्टसाध्य कह्यो है ।

अथोपदंशलिंगावर्त्यवलोकः ॥ ६३ ॥

घातादक्षालनाद्वा दृढनिधुवनतो योनिदोषाच्च पुंसां
मेढ्रे पंचोपदंशाः पृथगथ सकलैस्तैर्भवंत्यस्रतश्च ॥ २२५ ॥

चोटलगनेसे न धोनेसे वा बहुत मैथुन करनेसे स्त्रीके योनिके दोषसे पुरुषोंके लिंगमें पांच प्रकारको उपदंश होवेहैं वातपित्तकफसे सन्निपातसे और रक्तसे ॥ २२५ ॥

त्वच्यग्रे शेफसः स्यादरुणमतिरुजाशोफि वक्रं समं वा
नैकं वैकं विसर्पाकृति पृथु लघु वा चोपदंशस्य रूपम् ।
मध्ये कोशस्य संधौ प्रभवति परितश्चैकदेशेऽथवाधो-
वर्तिर्मांसस्य दोषैस्त्रिभिरपि शिखया कुक्कुटस्योपमेया ॥२२६॥

लिंगकी त्वचाके आगे विदीर्णता होय अतिदर्द सूजन टेढी या सम अनेक वा एक विसर्पाकृति फुन्सी मोटी वा छोटी होंय यह उपदंशको रूप है लिंगके वीच संधिमें एकदेशमें ऊंचे मांसकी वर्त्ती तीन दोषसे मुर्गाकी शिखासी लाल होय ॥ २२६ ॥

स्निग्धा पीडाविधात्री जगुरिह विबुधास्तां तु लिंगार्श एके
प्रायोऽन्ये मेढ्रवर्तिं कथमपि भिषजां नैति साध्यत्वमेषा ।

चीकनी पीडाकरवेवारीको यहा कोई एक पंडित उसे लिंगार्श कहे हैं बहुधा और कोई उसे लिंगावर्ति कहें वैद्योंको कोईभी प्रकारसे यह साध्य नहीं है ।

अथ शूकावलोकः ॥ ६४ ॥

यो मूढो मेढ्रवृद्धिं कलयति सहसा तस्य शूकामयाः स्यु-
र्लिंगे या सर्षपाभा प्रभवति पिडिका सर्षपी श्लेष्मवातात् २२७

जो मूढ एकाएकी लिंग वढावे उसे शूकरोग होवै है लिंगमें सरषोंसी फुन्सी कफवातसे होयहे सो सर्षपी हे ॥ २२७ ॥

वातादष्ठीलका स्याद्ग्रथितमिह कफाच्छूकपूर्णं सशोथं
कुंभीकाजांबवास्थि वरसरुधिरजाचालजी स्फोटरूपाः ।
संरब्धाद्वातकोपादृढनिधुवनतश्चाथ संघर्षणेन
प्राहुस्तत्रैव वैद्या मृदितमिह मुहुः पीडनात्पीडितं स्यात् २२८

वातसे अष्ठीला होय है यह कफसे गुथेसी सूजन पूर्ण काटे होय हे रक्तपित्तसे जामुनकी गुठलीके समान कुंभिका होय हे और रस-रक्तपित्तसे फटी अलजी होय है वातकोप होनेसे अतिमैथुनसे और लिंगघर्षणसे तहाँ वैद्योने कहाहै इहा वार २ मीडवेसे और पीडित करनेसे पीडित हो सो मृदित है ॥ २२८ ॥

संमूढा गंधवाहात्प्रभवति पिडिका चावमंथः पृथुः सा
त्वक्पाकः पित्तकोपादथ च रुधिरजा स्पर्शहानिश्च सा स्यात्।
मुद्गाभातूत्तमा स्यात्कमलमिव पुनः पुष्करीका ह्यनेक-
छिद्रः पोनः शताद्योर्बुदयुगलमसृङ्मांसजं चोक्तरूपम् २२९

वातसे संमूढपिडिका होवे हे और मोटी अवमंथ होवे हे पित्त-कोपसे त्वचापाक और रक्तसे स्पर्शहानि और रक्तपित्तसे पैदा मूगसी उत्तमा होयहे और पद्मकर्णिकासी अनेक पुष्करिका होवेहे और छिद्रयुक्त दोनो मांसरक्तसे पैदा अर्वुद और शतपोनकका रूप कहा है ॥ २२९ ॥

प्राग्वत्स्याद्विद्रधिस्तु प्रभवति तिलकालोस्रपाकस्तिलाभ-
शूकातंका इति स्युर्दश नवच निजैर्नामरूपैः सदृक्षाः ।

पहले कहीसी विद्रधि होइहे रक्तसे त्वक्पाक तिलके समान तिलकालक होयहे याप्रकार शूकरोग उन्नीस निजनामरूपके समान होय है ।

अथ कुष्ठावलोकः ॥ ६५ ॥

तिर्यग्गाः प्राप्य गाडीर्बहुवृजिनजुषोनुत्रयस्ते प्रदूष्य
त्वङ्मांसासृग्लसीकास्त्वचि च विदधते श्वित्रमेतत्तु बाह्यम् ॥

तिरछी नाडीनमें प्राप्त होके बहुत दुःखको भोगवेवारे तीनो दोष त्वचा मांस रक्तको दूषितकर वाहर श्वित्रकुष्ठ पैदा करै है ॥ २३० ॥

अंतःकुष्ठं तु चाष्टादशविधमखिलान्प्राप्य धातून्प्रदूष्या-
शेषं देहस्य मध्यं दधति बहुरुजं चेति कुष्ठं द्विधा स्यात् ।
कापालौदुम्बराख्ये तदनु निगदितं मण्डलं ऋष्यजिह्वं
सिध्मं चाथो विपादी किटिभमपि तथा काकणं पुण्डरीकम् ॥

भीतरके कोढ अठारह प्रकारके हैं देहकी सब धातूनको विगाडके अंगमें बहुत पीडाको देवे है वो दो प्रकारको कष्ट देवेवारो साध्यासाध्य भेदसे है कपालक उदुंबरनामक तापीछे कह्यो मंडलक ऋष्यजिव्ह सिध्म और विपादी किटिभ तथा काकण पुंडरीक ॥ २३१ ॥

चर्मस्फोटैककुष्ठं त्वलसकमपरं चर्मपूर्वं दलाख्यं
दद्रूपामाविचर्ची शतवदनमरुश्चेति नामान्यमीषाम् ।
कण्डूर्दाहः सतोदस्त्वचि च परुषता स्रावकोठोन्नतित्वं
स्रावस्वेदानवस्थाबहुरुषितपृथुः स्थापितो दीर्घकालम् २३२

चर्मस्फोट एककुष्ठ अलसक तापीछे चर्मदल नामक दाद पामा विचर्चिका शतारु यह इनके नाम हैं खुजरी दाह पीडा त्वचामें कठोरता स्राव कोठ वढनो स्राव पसीना न आनो पीडा बहुत कुपित चिर समयको स्थित ॥ २३२ ॥

रूढे रौक्षं निमित्ते लघुनि च रुधिरे कृष्णता रोमहर्षो
वारंवारं गुरुत्वं वपुषि च गदितं सर्वकुष्ठाग्ररूपम् ।
वातात्कापालमाहुः शिर इव परुषं श्यावशोफं सतोदं
पित्तादौदुम्बरं स्याददतिदरणरुजं लोहितौदुम्बराभम् ॥२३३॥

रूढता रूखापनके थोरे निमित्तसे पीडारहित रक्तसे पैदा कालापन लोमहर्ष वार २ देहमें भारीपन यह सब कुष्ठनको पूर्वरूप कह्यो है, वातसे पीडायुक्त माथेके समान कठोरता कालापन सूजनवारो कापालक कह्यो हे पित्तसे लाल गूलरकेसो अतिफट्यो पीडायुक्त उदुंबर होय है ॥ २३३ ॥

कंडूलं मंडलं स्यादरुणसितरुचिश्लेष्मतो मंडलाभं
रक्तांतश्यावमंतः सकृमि सपिडिकं ऋष्यजिह्वं तदाभम् ।
शोणप्रान्तातथाब्जच्छदमिव सकफात्पित्ततः पुंडरीकं
सिध्मं स्यादूर्ध्वदेहे कषणततरजोलाबुपुष्पप्रभं च ॥ २३४ ॥

कफसे मंडलसरीको खुजरीयुक्त लाल सुफेद शोभावारो वो मंडलक होय हे लाल भीतर कारो कृमि फुन्सीयुक्त मृगकी जिह्वा तासरीको ऋष्यजिह्व होय है श्वेतलाल प्रांतवारो तथा कमलपत्र सो कफसे, और पित्तसे पुंडरीक होय है तूँवाके पुषपसी आभा काली कसोटी तापे स्वर्णरेपासी सिध्म होय है ॥ २३४ ॥

गुंजावद्रक्तमंतः सितमतिरुजदं काकणं सन्निपाताद्
ज्ञातव्यं चैककुष्ठं झषशकलरुजस्वेदनं स्थूलवत्तु ।
चर्माख्यं हस्तिचर्मप्रभमथ किटिभं श्यावरूक्षं किणाभं
स्यात्तोदाढ्या विपादी करचरणतलस्फोटनं संदधाना २३५

सन्निपातसे सुफेद वा लाल गुंजा सो अति पीडा देवेवारो काकण होय हे और मछरीकी फारसो पीडायुक्त मोटो पसीनारहित एककुष्ठ जाननो और हाथीकी चामसो चर्मदलनामक होयहे और कारो रूखो व्रणसो किटिभ होय है हाथ पाँवके तल फाडे पीडायुक्त होय सो विपादी होय है ॥ २३५ ॥

कंडूमद्भिर्व्रणैः स्यादरुणिमकलितैर्मंडलैर्वालसाख्य-
मेतानि श्लेष्मवातादथ कफदहनात्तत्र दद्रूः सकण्डूः ।
संसर्पन्मंडला चाप्यतिलघुपिडिका श्यावशोणा सतोदा
ज्ञेयं तच्चर्मपूर्वं दलमिह दलनाच्चर्मणो भूरिपीडम् ॥ २३६ ॥

घाव खुजरीयुक्त लाल मंडलसो होय सो अलसकनामक है यह कफवातसे और तहाँ कफपित्तसे खुजरीयुक्त दाद होय है चारों ओर अतिछोटी फुन्सीयोंका मंडल कालो लाल पीडायुक्त फेले उसे चर्म फाडवेसे चर्मदल अतिपीडा देवेवारो जाननो ॥ २३६ ॥

पामा सस्रावदाहा वहुलघुपिडिका भूरिकण्डूश्च पार्ष्ण्योः
कच्छुः सैवाथ धूम्रारुणपृथुनिलयाः स्फोटकाः सर्वतोऽङ्गे ।

श्यावा रक्तैररुग्भिर्बहुभिरतिरुजैः स्याच्छतारुः सदाहैः
श्यावाः सस्रावकण्डो लघुलघुपिडका वातपित्ताद्विचर्ची २३७

छोटी स्रावयुक्त बहुत फुन्सी हाथमें दाह खुजरी करे सो पामा होयहै और एडीमें सोई तीव्रदाहयुक्त फटे काले अरुण बडे स्थान सब अंगमें फुन्सी होय सो कच्छू होयहे और काले अरुण पीडारहित या बहुत अतिपीडा दाह करे सो शतारु होय है काली स्राव खुजरीयुक्त फुन्सी छोटी २ वातपित्तसे विचर्चिका होवे है २३७

रूक्षः श्यावारुणत्वादुदयति पवनादुल्बणात्पित्ततस्तु
स्रावो दाहास्ररागाद्यथ कुपितकफात्स्नैग्ध्यकंड्वादि कुष्ठे।
द्वित्रिभ्यो द्वित्रिलिंगं त्वचि च निगदिता तत्र वैवर्ण्यसुप्ति-
प्रस्वेदा लोमहर्षोप्यसृजि परुषता शोथकंडूतितोदाः॥२३८॥

रूखो कालो अरुण वातसे पैदा होवेहे और उल्बण पित्तसे रक्त स्राव दाह राग होयहे और कुपित कफसे चीकनोपन खुजरी आदि युक्त होयहे कुष्ठमें दो और तीन दोषमें दो और तीनो चिह्नवारो होयहे तहाँ रक्तसे त्वचामें कठोरता विवर्णता सुप्तिता अति पसीना लोमहर्ष रक्तमें कठोरता शोथ खुजरी अति पीडा कही है ॥२३८॥

मांसे स्फोटः कराङ्घ्र्योरपि च परुषता संधिपीडास्यशोषो
मेदस्थः कोण्यभंगा प्रदरगतिहती पूर्वलिंगानि च स्युः।
मज्जास्थस्त्वक्षिरागस्वरहननमरुः कीटता घ्राणभंगः
शुक्रे कुष्ठे सति स्त्री शिशुरपि सरुजस्तत्र तत्साध्यमाद्यम् ॥

मांसगतकोढसे हाथ पाँवको फटनो और कठोरता संधिपीडा मुखशोष होयहे मेदमें प्राप्तसे हाथभंगसो वेग गतिनाश पहलेके चिह्न होयहैं मज्जामें प्राप्तसे आंखमें रोग स्वरस्थानको नाश कीडा पडनों घ्राणभंग होयहे शुक्रकुष्ठमें होनेसे कन्या और पुत्रकोभी कुष्ठित करेहै तहां यह आदिको साध्य है॥ २३९ ॥

कृच्छ्रादन्यत्त्वसाध्यं द्विमलमपि च यत्त्रयोत्थं च कुष्ठं
कुष्ठे कुष्ठं किलासं व्रणमुखरुगविस्रावि च श्वित्रसंज्ञम्।
मेदोसृग्मांसभेदित्रिभिरपि च मलैस्तत्तु वातेन रूक्षम्
रक्तं पित्तेन ताम्रं सकफमतिसितं वीतलोमातिपाण्डुः॥२४०॥

दो मलवारो कृच्छ्रसाध्यतासो अन्य और त्रिदोषोद्भव कुष्ठ असाध्य है कुष्ठमें कुष्ठ किलास है व्रण मुखमें पीडा स्रावयुक्त श्वित्रसंज्ञक है. त्रिदोषके विकारसे मेदरक्तमांससे और भेदी होताहे तहाँ वातसे रूखो पित्तसे लाल रक्तसे ताम्र कफसे युत अतिसुफेद लोमरहित अतिपांडु ॥ २४० ॥

श्वित्रं पाण्यंघ्रिगुह्याधरगमनलजं चातिशुक्लं पुराणं
नो साध्यं कुष्ठिसंगाद्यपि च परिहरेत्तेन संचारि यत्तत् ।

हाथ पाँव गुदा अधरमें अग्निज और, अतिशुक्ल पुरानो साध्य नही है और तासों कुष्ठीको संग छोड देनो यह संचारी रोग है ।

अथोदर्दशीतपित्तोत्कोठावलोकः ॥ ६६ ॥

दुष्टौ शीतात्समीरादरिकफपवनावत्र पित्तेन साकं
संभूयांतर्बहिस्तु त्वचि पृथुवरटीदंशतुल्यं दधाते ॥ २४१ ॥

शीतवायुसे कफवातदुष्टपित्तके साथ पैदा होकर भीतर बाहर त्वचाके मोटी चेटीदंशके तुल्य चकत्ता करे है ॥ २४१ ॥

शोथं वैद्या उदर्दं जगुरमुमधिकश्लेष्मकं शीतपित्तं
त्वन्ये वाताधिकत्वात्कफहुतवहतस्त्वेनमुत्कोठसंज्ञम् ।
कण्डूरुग्दाहवांतिभ्रमहृदलघुतारक्तदृक्तस्य रूपं
पित्तश्लेष्मानिलानामिह बहुलतया दाहकण्डूतितोदाः २४२

एसे शोथको वैद्य उदर्द कहेहें जो कोईक अधिक कफसे शीत-पित्त कहेहें और वाताधिक होनेसे उदर्द कहेहे कफपित्तसे भयो उस्की उत्कोठसंज्ञा हे खुजरी पीडा दाह वमन भौंर हृदय भारी लाल दृष्टि उत्कोठको रूप है पित्तकफवातकी अधिकतासे दाह खुजरी अतिपीडा होयहे ॥ २४२ ॥

अथाम्लपित्तावलोकः ॥ ६७ ॥

पित्तं त्वम्लादिदग्धं चिरचितमतिपृथ्वम्लपित्तं तदेत-
द्दोषैरूह्यं यथास्वं पृथगथ सकलं प्रायशश्चिह्नमस्य ।
तिक्ताम्लोद्गारकण्डूवमनविरसता तांतदाहाविपाका-
टोपप्रस्वेदमूर्च्छातृडरुचिकृशता पीतता वह्निमांद्यम् २४३

बहुतदिनको इकट्ठो पित्त खटाई आदि खानेसे दग्ध अतिभारी उसे अम्लपित्त कहेहैं जो दोषनकरके पैदा जेसे वातपित्तकफसे और सन्निपातसे बहुधा याके यह चिह्न हैं कडवी खट्टी डकार खुजरी वमन गलेमें घाव विरसता हृदयदाह अपाक अफरा पसीना मूर्छा प्यास अरुचि कृशता पीलापन मंदाग्नि ॥ २४३ ॥

अथ विसर्पावलोकः ॥ ६८ ॥

संदूष्यासृग्लसीकामिषरसनिलयं कुर्वते ते विसर्पं
क्रुद्धाः सर्वत्र सर्पल्लघुबहुपिडका मंडलं चाष्टधासौ ।
वातात्तोदादिवातज्वरवदिह परीसर्पसंज्ञोऽथ पित्ता-
दह्याद्दिः स्याद्विसर्पो ज्वलदनलनिभः सज्वरः श्लेष्मजस्तु ॥

रक्त मांस मेदरसके स्थानको दूषित कर जो विसर्प करे है कुपित सबरे देहमें छोटी बहुत फुन्सीनको मंडल करे सो आठ-प्रकारको है वातसें पीडा आदि वातज्वरके समान इहां विसर्प-संज्ञक होय हे और पित्तसे जलन आदि विसर्प जाज्वल्य अग्निसो ज्वरयुक्त कफसे पैदा ॥ २४४ ॥

कण्डूलः स्निग्धमंदज्वरयुगथ मतः सर्वतः सर्वरूपो
ग्रंथ्याख्यः श्लेष्मवातात्पवनहुतवहात्कष्ट आग्नेयसंज्ञः ।
श्लेष्माग्नेः कर्दमाख्यो गदित इह बुधैश्चिह्नमेषां तु मिश्रं
तत्तन्नामानुरूपं क्षतज उरुमरुत्पित्तरक्तात्स उक्तः ॥ २४५ ॥

खुजरीयुक्त चीकनो मंदज्वरयुक्त त्रिदोषसे सर्वरूपवारो कह्यो हे कफवातसे ग्रंथिकनामा होयहे वातपित्तसे कष्ट देवेवारो आग्नेयसंज्ञक होवेहे कफपित्तसे कर्दमनामक इहां पंडितोंने कह्योहैं इनके पहिले चिन्हसे मिश्र तिन २ नामोंके अनुरूप होय है. वात पित्त रक्तसे जांघमें पैदा घाव कह्यो है ॥ २४५ ॥

अथ मसूर्यावलोकः ॥ ६९ ॥

सास्रा दोषा मसूरोपमबहुपिडिकास्तन्वते ता मसूर्यः
कंडूपाप्मांगभंगभ्रमदृगरुणता शोफवैगंध्यमोहाः ।

इत्याद्यं रूपमासां रुधिरमलभवं लक्षणं तु व्रणोक्तं
वक्ष्ये तासां तु धातुस्थितिविकृतभवं लक्षणं सप्तधा स्यात् ॥

रक्तयुक्त दोष मसूरसी वहुत फुन्सीको विस्तार करे वो मसूरिकारोग हैं. खुजरी ज्वर अंगभंग औंर लाल नेत्र सूजन गंधनाश मोह यह याको पूर्वरूप है. रक्तमलसे पैदा यह व्रणमें कहे लक्षण हें इनके लक्षण कहे है. धातुस्थिति विकृतसे पैदा चिन्ह सात प्रकारके होय हें ॥ २४६ ॥

चर्मोत्था बुद्बुदाभा अथ रुधिरगतास्तास्तु गुंजासदृक्षा
मांसस्था भूरिकंडूज्वरगरिमरुजः स्निग्धवर्णा दृढाश्च ।
मेदोजा मंडलाभा मृदव उरुरुजश्चास्थिजाः सास्थिशूला
मर्मघ्न्यश्चर्मतुल्याः किमपि समुदितामज्जजास्त्वंगतुल्याः २४७

त्वचासे पैदा वुद्बुदासी और रक्तमें प्राप्त दोषसे गुंजाके समान होयहे मांसमें स्थित अति खुजरी ज्वर भारी पीडा चीकनो रंग और कठोर होयहे मेदसे पैदा मंडलसी नरम जाँघोंमें पीडा होयहे और अस्थिसे पैदामें हाडोंमें दर्दयुक्त मर्मघ्नी त्वचाके समान कहीहै यासे परे सो मज्जासे पैदा अंगके समान होयहे ॥ २४७ ॥

शुक्रस्थाः शुक्रतुल्याऽप्यतिलघव उरून्मादमोहांगभंगा
द्वे साध्यौ द्वे च कृच्छ्रे क्रमश इह मते नैव साध्यास्तदन्या ।
रक्तं वक्राक्षिनस्तो रतिरतिकसनं घुर्घुरत्वं च कण्ठे
निःश्वासोतीव मोहः प्रभवति मरणायेति चिह्नं मसूर्याम् ॥

वीर्यस्थित वीर्यसी अति छोटी और जाँघ उन्माद मोह अंगभंग करेहे दो साध्य और दो कृच्छ्रसाध्य क्रमसे इहां कहीं और अन्य साध्य नहीं है मुख नेत्र नाकसे पीडायुक्त रक्त वहे और कंठमें घुर्घुरता अतिकास निःश्वास अतिमोह होवे तौ मसूरीमें मरणके चिन्ह होय हैं ॥ २४८ ॥

अथ क्षुद्ररोगावलोकः ॥ ७० ॥

सर्वैर्दोषैः सपीडा प्रभवति पिडिका जांववाभेरिवेल्ली-
श्रुत्यंतः श्लेष्मवाताद्भवति पनसिका कच्छपी कूर्मवत्सा ।

वृत्ता स्यात्पारिमंडल्यतिरुगनलतोऽथो यवाख्या यवाभा
स्यात्पक्कोदुम्बराभानिलकफजनिरंधालजी वक्रहीना ॥२४९॥

सब दोषकरके पीडायुक्त फुन्सी जामुनसी इरिवेल्लिका होयहे कानके भीतर कफवातसे होय सो पनसिका हे और कच्छुआसी कच्छपी जो गोल मंडलसी अतिपीडायुक्त जोसी पित्तसे यवाख्या होय हे पके गूलरसी वातकफसे पैदा मुखहीन अंधी अलजी होयहे ॥ २४९ ॥

शोफश्चक्रीव दण्डप्रतिनिधिरुदिता गर्दभी स्थैर्यरुग्युग्
जालाद्या सैव सर्पत्यथ कठिनतरा सैव पाषाणपूर्वा ।
पद्मांतःकर्णिकाभा सरुगनलकफादिन्द्रवृद्धा गुरुः सा
वल्मीकाभस्तु वल्मीक इह निगदितोऽनैकवक्त्रो व्रणो यः२५०

सूजन गोल दण्डासी स्थिर पीडायुक्त गर्दभी कहीहे जाल आदिसे फेलनेवारी अतिकठिन सो पाषाणगर्दभिका है कमलके भीतरकी केशरसी पीडायुक्त पित्तकफसे पैदा भारी इंद्रवृद्धा हे विलेसो अनेक मुखवारो जो व्रण है सो वल्मीक इहां कह्यो है ॥ २५० ॥

कक्षाख्या साधिकक्षं हुतभुज उदिताथ त्रिदोषाग्निदग्ध-
स्फोटाभा वह्निरोहिण्यसुखकृदसुहृत्तप्रदेतीति दाहा ।
चिप्पं तु स्यान्नखाधः पलजमरुरथो वंक्षणे स्याद्विदारी
सर्वैर्दोषैः सरक्तैरथ सकफमरुन्मेदसो ग्रन्थिरुक्तः ॥ २५१ ॥

पित्तकोपसे पैदा वगलकेपासमें कक्षा (कखराई) नामक होयहे और त्रिदोपसे अग्निदग्ध फटीसी दुःख करवेवारी अतिदाह देवेवारी प्राणनाशकारी अग्निरोहिणी होय है नखके नीचेके मांसमें प्राप्त होके पाकहोवे वो चिप्प होय है सो वातज है, बगलमें स्थित विदारीकंदसी विदारी सब दोषयुक्त रक्तमेद कफवातसे युक्त ग्रन्थि कही है । अग्निरोहिणीको प्लेग कहे हे ॥ २५१ ॥

संधौ पादांगुलीनां मलसमयकृतात्कर्दमादिन्द्रलुप्तं
पित्तात्केशप्रणाशि क्वचिदथ पवनासृक्कफारुंषिका स्यात् ।

देहोष्मा पित्तयुक्तो जनयति पलितं वक्त्रदूष्यस्तु यूनां
वक्त्रेषु श्लेष्मवातादपरिपचतयः पद्मिनीकंटकास्ताः ॥२५२॥

जो पादकी अंगुलीनमें होयहे त्रिदोषसे शिरमें कीचसी जम जाय वो इंद्र लुप्तहे पित्तसे केशनाश होयहे और कभी कफवात रक्तसे अरुंषिका होतीहे देहकी गरमीसे पित्तयुक्त मनुष्यके माथेमें प्राप्त होके वाल श्वेत होते हें जवानीमें मुखको बिगाडनेसे ज्वानीकी फुंसी होती हें और वातकफसे कांटेयुक्त मुखपाक होवे सो कमलनीसरीको पद्मिनीकंटक हे ॥ २५२ ॥

न्यच्छं स्याच्चित्रवर्णं त्वचि च तदपरं व्यंगमीषत्पिशंगं
श्यामौ नीलीतिलाख्यौ मषक इह तथा स्यात्कुरंडाभिघर्षात् ।
लाक्षाभो मांसकीलो जतुमणिरुदितोऽथ ध्वजेधः प्रदिष्टा
वर्तिः पर्य्यादिरक्तं कदरमपि हते पित्तलैः शर्कराद्यैः ॥२५३॥

खालके ऊपर काला या सुफेत दाग होय सो न्यच्छ हे ताके पीछे त्वचापर मंडलाकार काला डाग होय सो व्यंग हें एसाही काला दाग नीलिकाऔर तिलनामक एसाही काला मषक होता हैं अति घिसजानेसे कुरंड रोग होता हे लाखके समान लाल मांसकीलक होता हे इसको लहसनभी कहते हे और लिंगको वहुत भीडनेसे लिंग ढकनेकी चर्म सूजजाय या लटक जाय सो परिवर्तिका है कंकड कांटे आदिके लगनेसे रक्तपित्तसे नष्ट होकर जो हाथ पांवमें ठेक पड जाय सो कदर हैं ॥ २५३ ॥

चर्माभं चर्म मेढ्रे दृढनिधुवनतो वेगरोधान्निरुद्धा-
द्यत्तज्ज्ञेयं गुदाख्यं ह्यथ गदितमहेः पूतना बालकानाम् ।
पायौ कंडूतिरागश्रुतिकृदथ भवेत्कार्श्यभाजो गुदाद्यो
भ्रंशो वाराहदंष्ट्रस्त्वनिलहुतवहाद्भूरिकण्डूव्रणोङ्गे ॥ २५४ ॥

अतिमैथुनसे लिंगमें चर्ममणिको ढाक देवे मूत्रवेग रोकवेसे उसे निरुद्ध प्रकाश जाननो तथा गुदाके रुकवेसे बालकोंके अहिपूतना रोग कह्यो है दुर्बलको गुदाआदिमें अति खुजरी रोग करे वो

गुदभ्रंश हे बहुत खुजरीवारे अंगमें व्रण हों जिस्को वातपित्तसे सो वाराहदंष्ट्र होवे है ॥ २५४ ॥

अथ मुखरोगावलोकः ॥ ७१ ॥

क्षारैरम्लैश्च माषैर्दधिघृतमधुरैः पिष्टभेदैः सशाकै-
स्तैलैर्वार्ताकपुष्पैरपि कफबहुलैरास्यरोगा भवन्ति ।
जिह्वायामामयाः स्युः षडिह तनुभृतामोष्ठयो रुद्रसंख्या
दंतावल्यां दशैव त्र्यधिकदश तथा दंतमूलोद्भवाश्च ॥२५५॥

खारो खट्टो और उर्द दही घृत मीठो पीठीके भेद शाकयुक्त तेल वेंगनके पुष्पकरके और कफ वढवेसे मुखरोग होवे हैं इहां देहधारी नरके जिह्वाके रोग छे होवे हैं और होठके ग्यारह एसेही दंतावलीके दश तथा दंतमूलमें पैदा तेरह होवे हैं ॥ २५५ ॥

वक्त्रे त्वष्टावथाष्टादश गलकुहरे तालुमध्ये नवेत्थं
प्रोक्ता सद्भिर्भिषग्भिः सकलमुखगदाः सप्ततिः पंच चोग्राः ।
श्यामा वातेन शाकच्छदरुचिररुचिश्चाथ पित्तात्सदाहा-
शोणात्विड्कंटकाढ्याप्यथ कफजनितामंदमासातिगुर्वी २५६

मुखमें आठ और गलकुहरमें अठारह तालुमध्यमें नौ या प्रकार सज्जन वैद्यकरके सकल उग्र मुखरोग पिचत्तर कहे हैं वातसे काली शाकपत्रसी अरुचि दाता और पित्तसे दाहयुक्त रक्तसे विष्ठा कंटकयुक्त और कफयुक्त मंद अति भारी (जिह्वा) ॥ २५६ ॥

जिह्वाधः शोथयुक्तः कफरुधिरकृतोथाग्रणेथादिजिह्वा-
कण्डूतिश्चोपतापो मुनिभिरिह मता लंबमानोपजिह्वाः ।
खंडैः खंडोष्ठमाहुर्बहुभिरथ रसाद्यर्बुदं बुद्बुदाभं
सामान्यं पूर्ववच्चार्बुदमथ पललग्रंथिमांसार्बुदं स्यात् ॥२५७॥

जिव्हाके नीचे कफरक्तसे पैदा जो शूजन है । वाके उपरांत जीभमें खुजरी चोपताप यह रोग मुनियोंने कहेहै और जीभ मोटी हो लटके और होठ फटें सो खंडोष्ठ कह्यौ हे और रससे

---

१ गुदभ्रंशवत् योनिभ्रंश होता है ।

वुद्बुदाकार होठ हो सो अर्बुद है ये अर्बुद पूर्ववत् सामान्य है और रक्तकी जो गाँठ बँध जाय सो मांसार्बुद होय है ॥ २५७ ॥

**अन्यन्मेदोर्बुदं तद् वृतवदथ पृथक्कैः समस्तैश्च रक्ता-
दाघाताच्छीघ्रमित्थं स्युरधरविषया आमया रुद्रसंख्याः ।
दंतेष्वादीर्यमाणेष्विव बहुलरुजो दालनः स्यात्समीरात्
कृष्णाच्छिद्रोऽतिपीडः पवनरुडुदितो दंतकः स्यात्कृमेश्च२५८**

और जो मेदकी गोल गाँठसी वधे सो मेदोर्बुद होयहे ये दोष सब न्यारे २ होके इन सबसे और रक्तसें चोटसे शीघ्र याप्रकार होयहे नीचेके होठके ग्यारह रोग होवे हैं दंत मानो फटते हों ऐसे बहुत पीडा देवेवारो वातसे दालन होय है और दांतमें कालो छेद होजाय अतिपीडा होय सो वातसे पैदा और कृमिसें कृमिदंतक रोग होवें हें ॥ २५८ ॥

**शीतादिस्पर्शभावं यदि नहि सहते दंतपंक्तिः सपित्ता-
द्वातात्स्याद्दंतहर्षोऽप्यथ विकटतया मारुतात्स्यात्करालः ।
श्लेष्मप्राणप्रशुष्को यदि भवति मलः शर्करा शर्कराव-
द्दीर्णपूच्चैः कपालेष्विह सकलमला सैव कापालिका स्यात् ॥**

शीत आदि पदार्थको दाँतसे स्पर्श नही सह्यो जाय सो पित्तसे पैदा दंतपंक्ति रोग है वातसे दंतहर्ष होय है और वातसेही विकट अति एसो कराल रोग होय है कफ प्राणवायुसे जो सूखजाय और शर्कराके समान विखरे सो दंतशर्करा होय है जो कपालमें जोरसें फटवेकीसी पीडा हो तो यह त्रिदोपसे पैदा भयो कापालिक होय है ॥ २५९ ॥

**पित्तास्राभ्यां विदग्धः कपिशरुचिरिति श्यावदंतः प्रदिष्टो
वक्रो वक्रश्च भंगः कफपवनकृतश्चेद्रदां भंजको यः ।
वातात्स्यादुन्नतो यत्पृथुरुगथ हनुस्तंभ इत्युग्रपीडो
जन्वादेः स्थानमोक्षाद्भवति किल हनोर्मोक्ष एपोऽनिलेन२६०**

पित्तरक्तसे दग्ध दाँत काले होजाय वो श्यावदंत कह्यो है और दाँत टेडे हो जाय सो दंतवक्र है कफवातसे पैदा जो दाँतको

काट डारे ये दंतभंजक है वातसे ऊंचे दाँत हो जाय सो दंतोन्नत होय है सो अति पीडाकारक है आगे वातसेंही अति पीडाकारक हनुस्तंभ होय है जीवआदिके स्थान हटवेतेंही डाढी लटक परे हे याको हनुमोक्ष होय हे येभी वातसे होय है ॥ २६० ॥

शीतादो नाम रोगः प्रवहति यदि चेद्दंतवेष्टादकस्मा-
द्रक्तं दुर्गंधिमांसं स्फुटति च बहुधा श्लेष्मरक्तोद्भवोयम् ।
शोथः स्याद्दंतमूलेष्विह यदि स भवेत्पुप्पुटः श्लेष्मरक्तात्
स्याद्रक्ताद्दंतवेष्टः स्रवति च रुधिरं चेदमुष्णं सपूयम् ॥२६१॥

जो अकस्मात् मसूढोमेंसे दुर्गंधियुक्त रक्त वहे सो शीताद नामक रोग है कफरक्तसे पैदा ये बहुधा मांसको फाडवेवारो दाँतकी जड (मसूढों) में शोथ होवे यह कफरक्तसे पैदा दंतपुप्पुट है जो मसूढोंमेंसे रक्त गरम पीव वहै सो रक्तसे पैदा दंतवेष्ट है ॥ २६१ ॥

लालास्रावी च शोथः कथित इह बुधैः सौषिरः श्लेष्मरक्ता-
च्छैथिल्यं दंतपंक्तिः प्रभवति च महासौषिरस्तालुभेदी ।
मर्त्यः ष्ठीवत्यकस्मात्प्रवहति रुधिरं शीर्यते चापि मांसं
दंतानां मूलदेशे यदि स परिदरः श्लेष्मपित्तास्रजातः २६२

जो शोथमें लार वहे कफरक्तसे पैदा इहां पण्डितोंने सौषिर कहाहै और दंतपंक्ति ढीली हो जाय तौ तालुभेदन करवेवारो महासौषिर होय हे मनुष्यके थूकवेमें अकस्मात् रक्त वहे मांस गलजाय दाँतोंकी जडकी जगह कफपित्तरक्तसे जो पैदा हो सो परिदर होय है ॥ २६२ ॥

पित्तासृक्संभवः स्यादपकुश इह तद्दाहचांचल्यपाकै-
रस्रस्रावैश्च विज्ञेय इह गुरुरुजः पूतिगंधेन युक्तः ।
वैदर्भोल्पाद्विघातादपि वहति रजः पाकशोथातिपीडा
दंतोद्भूतात्सलालाद्रुधिरकफभवो विद्रधिःशोथयुक्तः २६३

दाह चंचलता पाक रक्तस्राव इन चिह्नकरके जान्यो जाय एसो दुर्गंधियुक्त बहुत पीडा देवेवारो पित्तरक्तसे पैदा अपकुश होय है

थोडीसी चोटसेभी मसूढोंमेंसे रक्त वहे पाकशोथ अति होवे वो वैदर्भ हे दाँतमेंसे पैदा लार वहाय वेसे जान्यो जाय एसो रक्तकफसें पैदा शोथयुक्त विद्रधि होय है ॥ २६३ ॥

वातात्पित्तात्कफाच्च त्रय इति गदिताः केवलादामया वै
तत्तद्रूपा भवंति श्वयथुयुज अतिक्षोभदा दंतमूले ।
पाकाः स्युः पंच पित्तानिलकफरुधिरात्सन्निपाताच्च वृद्धात्
पूत्यास्यत्वेऽर्बुदे चोर्ध्वगद इतिविधः शोषमास्यांतरे चेत् २६४

केवल वातसे पित्तसे कफसे तीन रोग इहां कहे ये अपने २ दोषानुरूप शोथयुक्त दंतमूलमें अतिक्षोभ देवेवारे होय हैं वढे भये पित्त वात कफ रक्त सन्निपातसे ये पाँचोंसे पाँच पाक होवे है ये मुखमें दुर्गंधि जब आवे तब मुखके भीतर अर्बुदमें शोष हो सो ऊर्ध्वगद कहा है ॥ २६४ ॥

दोषाः संदूष्य मांसं रुधिरमपि खरानंकुरान्कंठरोधं
कुर्वाणास्ते विकारं पृथगथ मिलिताः पंच रोहिण्य उक्ताः ।
हंत्येषा सप्तरात्रात्प्रकुपितपवनात्पंचरात्रात्तु पित्तात्
प्राधान्याच्छ्लेष्मरक्तात्त्रिभिरपि दिवसैः सद्य एव त्रिदोषात् ॥

दोष हैं सो मांसरक्तको दूषित करके बडे कठोर अंकुर पैदा करे कंठको रोके हे ये विकार वात पित्त कफ रक्त और सन्निपातसे पैदा पांच रोहिणी कही हैं वातकोपसे हो तौ सात दिनमें मारडारे पित्तसे पाँच रातमें रक्तसे तीन दिनमें कफकी अधिकतासे तीनही दिनमें त्रिदोषसे शीघ्रही सो प्राणनाशक है ॥२६५॥

शोथः कोलास्थिमात्रः कफजनिरुदितः कंठशालूकनामा
जिह्वाग्रो योधिजिह्वोप्यथ वलयमिह श्लेष्मजं मंडलाभम् ।
श्वासघ्नं श्लेष्मवातप्रभवमभिवदंत्यल्पशोथं बलासं
वृंदः स्यादल्पदाहो ज्वरकृदतिरुजः पित्तरक्तानिलेभ्यः २६६

वेरकी गुठलीके समान शोथ कफसे होय सो कंठशालूक नामा हे जीभके आगेके भागमें अधिजिव्ह और कफसे पैदा मंडलाकार वलयभी यहाँ कह्यो है कफवातसे पैदा जो अतिअल्प शोथ होके

श्वासको नाश करे सो बलास है पित्तरक्तवातसे पैदा अल्प दाह ज्वरकर्ता अतिपीडायुक्त वृंदरोग होय है ॥ २६६ ॥

दोषैः सर्वैः शतघ्नीतनुसदृशतनुर्जीवितघ्नी शतघ्नी
व्याधिः स्यादेकवृन्दः कफरुधिरभवो वृत्त उच्चैः सदाहः ।
श्लेष्मासृग्भूर्गलायुर्बदरफलनिभो विद्रधिस्तु त्रिदोषात्
कंपः कंडूश्च रक्तस्रुतिरधिकरुजः शोथ उच्चैर्भवेच्चेत् ॥२६७॥

सर्व दोषसे तो पके अंगके समान अंगवारी शतघ्नी प्राणनाशिनी होय है कफरक्तसे पैदा कंठमें सब ठोर शोथ अतिदाहयुक्त ऊँची व्याधि होय सो एकवृंद है कफरक्तसे पैदा वेरफलके समान गलायु होय हे त्रिदोषसे पैदा कंप खुजरी और रक्तस्राव अति पीडावारी ऊंची शोथ हो तो गलविद्रधि है ॥ २६७ ॥

शोथो वाताध्वहंता सरुधिरकफजः स्याद्गलौघो ज्वरादि-
शुष्कश्वासः स्वरघ्नो विसदृशनिनदः श्लेष्मवातप्रभूतः ।
शोथो मांसप्रतानैर्ग्रथित इव भवेत्सर्वजः सोवलम्बी
पित्तोत्थो मांसखण्डी करणपटुरयं पार्श्वतः स्याद्विदारी २६८

रक्तकफसे पैदा ज्वर आदियुक्त कंठमार्ग रुके सो शोथ गलौघ होय है कफवातसे पैदा एसो जो स्वरनाशके समान सूखी श्वासकर्ता मांससमूहसे गाँठसी शोथ त्रिदोषसे हो सो अवलंबी होय है और ये मांसको टूक २ करवेमें चतुर कंठके वगलमें पित्तसे पैदा विदारी होय है ॥ २६८ ॥

संधौ स्यात्तालुशुण्डी कफरुधिरभवो गर्दभाण्डाभशोथः
शोथस्तस्मात्पटोलाकृतिरिह गदिता तुण्डिकेरी सतोदा ।
रक्तात्स्यादध्रुषाख्यः स बदरवदथ श्लेष्मतः कच्छपः स्यात्
कूर्माम्भोथार्बुदं प्रागिव रुधिररुषः पद्मसत्कर्णिकाभम् २६९

गधाकी आँडसी शोथ रक्तसे पैदा संधिमें होनेवारी तालुशुण्डी होय है पटोलसी आकृतिवारी पीली शोथ पीडायुक्त होय सो ये तुण्डिकेरी कही हे रक्तसे वेरसी (गाँठ) हो सो अध्रुष नामा

होय है और कफसें कछुआसी शोथ होय सो कच्छपी होय है रक्तदोषसे पैदा कमलकर्णिकासी शोथ सो अर्बुद होय है ॥२६९॥

दुष्टं मांसं किमप्युन्नतमिह गदितो मांसघातः कफाढ्यो
नीरुग्यः श्लेष्ममेदोजनितबदरवत्पुप्पुटस्तालुदेशे ।
उक्तो वाताद्विदारी सरुगथ गदितस्तालुपाकस्तु पित्ता-
दुक्ता रोगा नवैते निजजननमलभ्राजितास्तालुदेशे २७०

दुष्ट मांस कछु ऊंचो हो जाय सो कफसे पैदा मांसघात कह्यो है, तालुदेशमें बेरसी शोथ हो वह पीडारहित कफमेदसे पैदा पुप्पुट कहा है वातसे पीडायुक्त विदारी कही है, पित्तसे तालुपाक कहाहै याप्रकार तालुदेशमें होनेवारे रोग अपने २ पैदा करवेवारे दोषके मलकरके प्रकाशित हैं ॥ २७० ॥

अथ कर्णरोगावलोकः ॥ ७२ ॥

स्याद्वातात्कर्णनादः कफपवनकृतं चापि बाधिर्यमाहुः
कर्णक्ष्वेडस्तु वेणुस्वन इव च तथाऽथार्बुदं तूक्तरूपम् ।
कर्णस्रावोऽम्बुघातादिभिरनिलकृतो वातजं कर्णशूलं
श्लेष्मा पित्तोष्मदग्धः प्रभवति यदि चेत्कर्णगूथस्तदा स्यात्॥

वातसे कर्णनाद होवे है और कफवातसेही बहरापन कह्यो है कानमें बाँसुरीसी बजे वो कर्णक्ष्वेड कही है एसेही अर्बुदके रूप कहे है कानमें जल गिरवे आदि और वातसे भयो कर्णस्राव कह्यो है और वातसेही पैदा कर्णशूल है, पित्तकी गरमीसे कफ जल-जाय तासो कर्णगूथ होवे है ॥ २७१ ॥

पीडाकृद्गूथ एव स्रवति च शिररुक्स्यात्प्रतीनाहनामा
कंडूः श्लेष्मानिलोत्था कृमय इह यदा स्युः कृमेः कर्णकः सः
कर्णार्शस्तु त्रिदोषाच्छ्वयथुरिह कफाद्विद्रधिः पक्षघातात्
पाकः पित्ताच्च पूतिस्रुतिरनिलकृता कीटतः कीटकर्णः २७२

एसेही गूथ पके वहे शिरमें पीडा करे तौ प्रतीनाहनामा होय है कफवातसे पैदा खुजरी हो तथा कानमें कीडा पडजाय तो यह

कृमिकर्णक होय है, त्रिदोषसे कर्णार्श होता हे कफसे शोथ होता हे पक्षघातसे विद्रधि होता हे पित्तसे पाक होता हे वातसे भयी पूतिस्रुति होती हे कीट घुसवेसे कीटकर्ण होताहे है ॥ २७२ ॥

अथ नासारोगावलोकः ॥ ७३ ॥

दोषैर्भिन्नैरभिन्नैरपि च रुधिरतः स्यात्प्रतिश्यायसंज्ञ-
स्तत्रामे तत्तदंका शिरसि च गुरुता सज्वरारुण्यमक्ष्णोः ।
नासास्रावश्च भोज्येऽरुचिरथ लघुता सर्वशस्तत्र पक्के
तन्मूलं स्रावसंज्ञं व्रणमगुरुमलस्रावयुक्तं सरुक्क ॥ २७३ ॥

अलग २ वातपित्तकफसे औरभी त्रिदोषसे रक्तसे प्रतिश्याय-संज्ञक रोग होय है तहाँ इन पाँचोंके न्यारे लक्षण कहते हैं वातसे शिरमें भारीपन पित्तसे ज्वर रक्तसे लाल आँख कफसे नासास्राव भोजनमें अरुचि और सन्निपातसे लघुता ये सब कच्चेके लक्षण हैं, ताकी जड नासाव्रण होके हलका मलस्राव पीडायुक्त हो वो नासास्रावसंज्ञक है ॥ २७३ ॥

पूर्वं शीर्षे चितो यः कफ इह लवणो भ्रश्यते नासिकायां
सान्द्रो दग्धार्कतापैः स तु मुनिगदितो भ्रंशथुः श्लेष्मपित्तात् ।
नासायां पूतिगंधिर्विषयविरहिता या बलासास्रवातैः
क्लिन्नायां पीनसः स्यात्स च चिरमुषितो दुष्टपूर्वप्रदिष्टः २७४

पहले माथेमें इकट्ठो कफसे लवण सो खारी (पानी) नाकसे गिरे सूर्यतापसे जल्यो कफपित्तसे पैदा गाढो मुनियोंने भ्रंशथु कह्यो है, और कफरक्तवातसे पैदा दुर्गंधि गंधज्ञानरहित नासामें खेददाता पहलेके सब लक्षणयुक्त बहुत दिन रहवे ते दुष्ट प्रतिश्याय होवेहै ॥ २७४ ॥

पित्ताच्छ्लेष्माभिदग्धो मरुदिह वदनान्नासिकायाश्च विस्रो
निर्गच्छेत्पूतिनस्यं तदमुमुपदिशेदर्बुदं तूक्तरूपम् ।
नासामर्मस्थितो यो बहिरभिसरति श्लेष्मयुक्तः समीरो
वारंवारं सशब्दं क्षवथुरिति भवेदर्श उक्तं पुरावत् ॥२७५॥

पित्तरक्त गरमीसे दग्धवात सो मुखनाकमेंते कफ निकले सो पूतिनस्य कह्यो है, और अर्बुदकौ पहले कह्यो हे सोही रूप जाननो, कफयुक्त वात है सो नाकके मर्मस्थानमें स्थित हो बाहर निकले और बार २ शब्द हो छीक आवे तौ यह पूर्ववत् अर्श जाननो ॥ २७५ ॥

नासानाहस्तु वातैः सकफ इह यदोच्छ्वासमार्गं निरुंध्या-
न्नासाशोषस्तु कृच्छ्राच्छ्वसति यदि नरः शुष्कनासः समीरात् ।
सास्रात्पित्तान्नसश्चेत्स्रवति च रुधिरं दाहयुक् पूयरक्तं
नासा दीप्तेव पित्ताद्यदि रुधिरयुताद्धूमभावेतिदीप्तिः २७६

वातकफसे युक्त जब श्वासमार्गको रोकदे तौ नासानाह जाननो वायुसे नाक सूके और वो नर कठिनतासे श्वास लेवे सो नासाशोष है रक्तपित्तसे नाकमें पाक होके दाहयुक्त रक्त पीव वहे सो पूयरक्त है, जो रक्तयुक्त पित्तसे नाक जलीसी माल्म हो और नाकसे धूआँसो वायु निकले तौ नासादीप्ति है ॥ २७६ ॥

नासाया एकभागे व्रण इह पुटको नामतस्तीव्रतापो
नासापाकस्तु पित्तादिति नसि तु वसुक्षोणिसंख्या गदाः स्युः ।

नाकके एक भागमें जो व्रण हो अतिपीडावारो सो नासापुटक नामक है, पित्तसे नासापाक होता हे ये नासाके अठारह रोग होय हैं ॥

अथ नेत्ररोगावलोकः ॥ ७४ ॥

धूलीधूमाम्बुलीलादधिशफरसुराशाकशोकारनाल-
स्वेदात्स्वप्नाव्यवायाम्लहतिवमिकटुस्नेहतीक्ष्णोष्णमाषैः २७७

धूल धुआँ जलक्रीडा मछरी मदिरा शाक शोक आरनाल पसीना सोनो मैथुन खटाई चोट वमन चिरपिरो चीकनो तीक्ष्ण गरम उर्द ॥ २७७ ॥

विण्मूत्राश्रुप्ररोधैश्चिरमतिलघुनो वस्तुनो दर्शनेन
यक्षादेः प्रेक्षणैश्च स्युरिह नयनयोः सप्ततिः षट् च रोगाः ।

सर्वस्मिंल्लोचने स्युस्तुरगशशिमिता व्याधयः कृष्णभागे
चत्वारश्चाथ दृष्टौ खरकिरणमितास्तद्वदागंतुजौ द्वौ ॥२७८॥

मल मूत्र आँसू रोकवेसे बहुत देरतक छोटी चीज देखवेसे भयानक देखवेसे नेत्रमें छिहत्तर रोग होवेहैं तामें सर्वनेत्रमें चौदह रोग और काले भागमें चार और दृष्टिमें पंद्रह ताके समान दो आगंतुज होयहैं ॥ २७८ ॥

शुक्ले त्वेकादशैते नव पुनरुदिताः संधिजा वर्त्मजास्तु
ग्लौदोःसंख्याः समस्ता इति नयनगदाः सप्ततिः षट्च नृणाम्।
सुस्तोदस्तंभरौक्ष्यस्रुतिभिरनिलजो दाहपाकोष्णबाष्पैः
पित्तोत्थः शौक्ल्यशोथप्रचुरजलभरस्नैग्ध्यजाड्यैः कफोत्थः ॥

शुक्लभागमें ग्यारह संधिमें पैदा होनेवाले नौ वर्त्ममें इक्कीस ये सब संख्या मिलके मनुष्यके नेत्रमें छिहत्तर रोग होवेहैं वातसे पैदा अति पीडा स्तंभ रूखापन स्राव करे पित्तसे पैदा दाह पाक गरम धूआँयुक्त कफसे पैदा सुफेदाई शोथ जलभरे चिकनापन जडता इनसे युक्त होय है ॥ २७९ ॥

ताम्रप्रांतारुणाश्रुस्रुतिबहुलरुजातोदपाकैरसृग्जो
नेत्राभिष्यंद उक्तस्त्विति चिरसमयादेष एवाधिमन्थः ।
श्लेष्मोत्थश्चाधिमन्थः क्षपयति नयनं सप्तरात्रादथासृक्
प्रादुर्भूतः शराहात्तदनु पवनजो वासरैर्वह्निसंख्यैः ॥ २८० ॥

नेत्रप्रांत लाल लाल आँसू वहैं बहुत पीडा तोद पाक रक्तसे पैदा नेत्राभिष्यंदमें होय है और ये बहुत दिनतक ठेरे तौ अधि-मंथ होय है कफसे पैदा अधिमंथ सातदिनमें आँखको नाश करै और रक्तसे पैदा पाँच दिनमें वातसे पैदा तीन दिनमें ॥ २८० ॥

पित्तोत्थः सद्य एव प्रणिगदितमिदं रूपमेषां चतुर्णां
नेत्रं प्रायः समूलं पतदिव रुजया निःक्रियं सार्धमूर्ध्वम् ।
नेत्रे वाताधिमंथो व्यथयति नितरां चेदुपेक्षापराणां
प्रोक्तोऽसाध्यस्तदानीं मुनिगणकथितोऽसौ हताद्योऽधिमन्धः

पित्तसे पैदा शीघ्र दृष्टिनाश करेहै ये इन चारोंके रूप कहे ऐसी पीडा हो मानो नेत्र जडसे गिर परेंगे आधो माथो बहुत दूखे वे काम होजाँय यह नेत्रमें वाताधिमंथ जो है सो भूलराखवेते अतिदुख देवे असाध्य होवे है सो मुनियोंने हताधिमंथ कह्यो है ॥ २८१ ॥

वारंवारं भ्रुवौ चेन्नयनयुगलकं चाथ पर्येति वातः
पीडा शोथो रुणश्च स्रवति निगदितः पर्ययो वातपूर्वः ।
नेत्रं स्यादाविलं चेदरुणममृदुलं दाहि रूक्षं च वर्त्मा-
न्तस्तत्प्रोन्मीलने रुङ् मुनिभिरभिहितश्चेति शुष्काक्षिपाकः ८२

वार वार भ्रकुटी वा नेत्रोंमें वायु पीडा करै शोथ अरुणता और स्राव होय तौ वातपर्यय है नेत्रसे देख्यो नही जाय लाल रंग होजाय कठोर दाह रूखापन पलकके भीतर दुःख उघारवेमें पीडा याको मुनिलोगोंने शुष्काक्षिपाक कह्यो है ॥ २८२ ॥

मन्यास्थो वाऽवटुस्थोऽप्यथ शिरसि गतः कर्णगो वा हनुस्थो
वातः संपीडयेद्यद् ध्रुवमथ नयने सोऽन्यतोवात उक्तः ।
नेत्रं स्यादम्लभक्ष्याद्यदि कपिशतमं प्रांततः शोणशोणं
सस्रावं दाहि शोथान्वितमपि च तदाम्लोषिताख्यो गदः स्यात्

मन्यामें माथेमें और ग्रीवाकी संधीनमें कानमें डाढीमें भृकुटीमें नेत्रमें वात पीडा देवे सो अन्यवात कह्यो है, खटाई खानेसे काले पीले नेत्र हों आसपास लाललाल स्राव दाह शोथयुक्त जो हो तौ अम्लोषित नामक रोग होय है ॥ २८३ ॥

नेत्रे शोथः सशूलः पृथुरुगरुणता स्रावयुक्तः सतोदो
दोषस्यामस्य लिंगं ह्यथ भवति पुनर्लब्धदस्तत्र पक्के ।
कण्डूलः सोपनाहः श्वयथुरुगरुणो लोहितोदुम्बराभः
सस्रावो नेत्रपाकः श्वयथुविरहितैस्तैस्त्वशूलोऽक्षिपाकः २८४

नेत्रमें शोथ शूलयुक्त बहुत पीडा लाल स्राव तोदयुक्त ये तौ अपकके चिन्ह हैं और पकजाँय तब लाभदाता खुजरी शोथ पीडा ललाई लाल गूलरके समान उपनाह रोग है स्रावयुक्त नेत्रपाक शोथरहित पीडायुक्त अक्षिपाक है ॥ २८४ ॥

राज्यक्ष्णोर्यस्य ताम्रा मुहुरपि धवला स्युःशिरोत्पात एषो
व्याधिर्नीरुक् सरुग्वा स तु चिरसमयः स्यात्प्रहर्षः शिराद्यः ।
सूच्यग्रेणेव विद्धं व्रणमरुणतमं तीव्रपीडं कदुष्ण-
स्रावं नेत्रासितेंतर्गतरुगिव बुधाः शुक्रमाहुर्व्रणाद्यम् ॥२८५॥

जाके नेत्र कभी लाल कभी सुफेद कांतिवारे होय तौ यह शिरोत्पात होयहे, पीडारहित वा पीडायुक्त बहुत दिन रहवेवारी व्याधि सो शिराप्रहर्ष होय है, सूईके अग्रभागके वेधवेकीसी पीडा घाव बहुत लाल तीव्रपीडा गरम स्राव नेत्रके सुफेद भागमें ये रोग पीडावारो विद्वानोंने व्रणशुक्र कह्यो है ॥ २८५ ॥

कृष्णोऽभिष्यंदमूलः शशिरुचिरमलश्चाव्रणः शुद्धशुक्रो-
ऽथाक्रामत्यंशकं तैरसितमिह सितोंशोऽक्षिपाकात्ययः स्यात् ।
मांसं शोणं समुत्थाप्यजड इव महच्चाजकाजातमाहु-
र्नैतत्साध्यं त्रिकं तु प्रथममिह रुजां कष्टसाध्यं कदाचित् २८६

अभिष्यंदके आदि काले भागमें सुफेद रंगवारो जौ मेल व्रण-रहित होय है वो शुद्ध शुक्र है आँख पाकसे सुफेद कारो जल वहे मांसरक्तको उठायके वहुत जडकी नांई जो रोम वढे सो अजका-जात कह्योहै, यह रोग त्रिदोपसे साध्य नहीहै प्रथम ये वात पित्त कफसे होय सो कभी कष्टसाध्य है ॥ २८६ ॥

आद्यं दृष्टिः प्रविष्टे पटलमिह मले वीक्षते व्यक्तमर्थं
द्वैतीयीकं तु दूरांतिकमलघुगुरुं मन्यते वैपरीत्यात् ।
पश्येच्चाविद्यमानानपि मशकमुखान्पक्षिणश्चापि जालं
सूचीपाशं न यत्नादपि तिमिरमिदं वृत्तरूपे त्रिदोषे ॥२८७॥

आदि पटलमें दोष भरेतें दृष्टि हे सो साफ नहीं देखे, दूसरे पटलमें दूर पास छोटी मोटी वस्तु विपरीततासे देखे अविद्यमा-नको देखे विद्यमानको न देखे, मच्छर आदिको देखे पक्षीजाल-कोभी देखे यत्नसे भी सूईको छेद नही देखे त्रिदोषसे पैदा याप्र-कार तिमिर कह्यो है ॥ २८७ ॥

वृत्तं वस्त्वीक्षते तत्पुनरुपरि गते तत्र दूरस्थितं वा-
ऽधःस्थानस्थे समीपस्थितमपि च तथा पार्श्वगे पार्श्वगं वा ।
द्वित्रिःस्थे द्वित्रिरंतःस्थितवति तु बृहद्भ्रस्वमेकं द्विधा च
वाताद्याविद्धमेषां कलयति कलुषा शोणशोणा चला च २८८

गोलवस्तुको देखे वह फेर ऊपर चलीजाय दूरस्थित होय तोभी देखे नीचे होय समीपकी भी देखे वगलमेंकी वस्तुको भी देखे दो तीनजने स्थित हो तौ भीतर तीनजनेको देखे वडीको छोटी देखे एकको दो देखे याप्रकार वायुसे विद्ध जो ये तिमिर है सो लाल-लाल और अचल है ॥ २८८ ॥

पित्तान्नीला च नीलं जगदमरधनुर्दण्डखद्योतविद्युत्
विद्योतिव्योममन्यत्कलमपि शिखिनां श्लेष्मतः स्निग्धशोचिः
श्वेतांशं खेन्दुकुंदैरिव समुपचितं रक्ततो रक्तरोचि-
र्नानावर्णं समूहादितरदपि तथा तैक्ष्ण्ययोगात्कृशस्य ॥२८९॥

पित्तसे नील तिमिर सो वस्तु नीली देखे इंद्रधनुष देखे पट-वीजना विजली आकाशवान् प्रकाश और मोरशब्द नृत्य देखे कफसे स्वेत और चीकनी स्वेत वस्तु शंख चंद्रमा कुंदपुष्पयुक्तसी देखे रक्तकांतिवारी रक्तसे देखे और सन्निपातसे नानावर्णवारी वस्तु और अलग २ भी कृशताके अतियोगसे देखेहै ॥ २८९ ॥

दोषे प्राप्ते तृतीयं व्रजति च तिमिरं काचताद्दक्तदोर्ध्वं
पश्यन्नाधोच्छसूक्ष्माम्बरपरिपिहिते वान्वहं हीयते च ।
वातादारक्तकाचद्युतिरनृजुमृजुं मन्यतेऽल्पं बहुत्वं
दीपेन्द्वादेरभावं मुखमपि दहनान्नीलकाचप्रभा सा ॥२९०॥

तृतीयपटलमें दोष जानेसे अँधेरो प्राप्त हो दृष्टिनाश हो ऊपर न दीखे सूचीको छेद न दीखे दिन २ हीन होवे वातसे पुतली लाल मोटी चीज छोटी दीखे दीपक पूरो न दीखे मुखमें दाह पुतली-प्रकाशहीनसी होवें ॥ २९० ॥

व्योमेक्षेतेन्द्रचापाद्युपचितमधिकं श्लेष्मतस्त्वर्कदीपं
चन्द्राद्यैः कांस्यरोचिर्भिरिव परिगतं कांस्यकांतिश्च दृक् स्यात्

रक्तात्कृष्णारुणाभा मिलितमिह भवेल्लक्षणं सन्निपातात्
संसर्गाच्चाथ दोषे गतवति पटलं लिंगनाशश्चतुर्थम् ॥२९१॥

चौथे पटलमें दोष आनेसे आकाश इंद्रधनुष न दीखे कफसे सूर्य दीपक चंद्र कांसो इनकी शोभा न दीखे, दृष्टिमें अशोभा रक्तसे होयहे काली लालसी आभा सन्निपातसे होयहे सब लक्षणयुक्त संसर्गसे लिंगनाश होय है ॥ २९१ ॥

तत्संख्यस्तत्तदंकाधिक इह दृगनालोकना धूमधूली-
पूर्णे वा रक्तरोचिर्भवति निजमितेः किंचिदल्पा पृथुर्वा ।
व्यक्तं पित्ताल्पकत्वात् निशि पुनरहनि प्रेक्षतेतो बृहत्त्वा-
दव्यक्तं पीतरोचिर्जगदपि च तथा रक्तदा पित्तदग्धा २९२

तिस २ रोगकी संख्यावाले रोगमें देखवेसे धूआँ धूल नेत्रसे न दीखे बहुत देखवेसे लाल दीखे कोई जगे अल्प कोई जगे बहुत बहुधा पित्त अल्प होनेसे रात्रिमें नहीं दीखे और पित्तके वढनेसे दिनमें नही दीखे दृष्टिमें पित्तसे दग्ध रक्तसे जगत्को पीलो देखे ॥ २९२ ॥

स्पष्टं श्लेष्माल्पभावादहनि नतु निशि प्रेक्षते श्लेष्मदग्धा
दृष्टिः शुक्का च दोषे गतवति पटलेषु त्रिषु स्यान्निशांधाः ।
शोकाद्यैर्धूमदर्शिन्यहह विनिहता भूस्तु धूमाविलेव
स्थूलं ह्रस्वं तु पश्येद्भ्रमरवदसिता पित्ततो ह्रस्वदृष्टिः ॥२९३॥

बहुधा कफके अल्प होनेसे रात्रिमें नही दीखे सो श्लेष्मदग्ध होय है. दृष्टि सुफेद और तीसरे पटलमें दोष प्राप्त होनेसे निशांध होय है शोक आदिसे धूआ दिनमें देखे नही मोटो छोटो दीखे भौंरासो दीखे पित्तसे छोटी दृष्टि होय हे ॥ २९३ ॥

चित्रं पश्येज्जगच्चेन्नकुल इव दिवा नाकुलांध्यं त्रिदोष्या-
विच्छाया संकुचंती सरुगपि मरुतः सा तु गंभीरदृष्टिः ।
अन्यावागंतुसंज्ञौ भवत इह गदौ द्वावभिष्यंदमूलै-
स्त्वेको गंधर्वपक्षोरगसुरमिहिरादीक्षते नापरः सः ॥ २९४ ॥

नोलासरीखो जगतको विचित्र देखे सो नकुलांध त्रिदोषसे होय है छायारहित या छायायुक्त संकुचित दृष्टि हो पीडायुक्त वातसे गंभी-

रदृष्टि होय है दो आगंतुक संज्ञक हैं दो अभिष्यंदके प्रथममें हैं एक गंधर्वपक्षमें है दूसरो सर्वपक्षमें हैं ॥ २९४ ॥

श्यावार्मा स्यादयं चेत्कपिशमिह भवेदर्म शुक्लं त्रिदोष्या
शुक्लार्मा श्लेष्मतः स्यात्पृथुभवदिह चेदर्मशुक्लेति शुक्लम् ।
रक्तार्मा रक्तजोम्भोरुहरुचिमृदुलं स्रावि तच्चीयमानं
मांसार्मा सन्निपाताद्यकृदिव मृदु चेदर्म तद्वर्धमानम् ॥२९५॥

पीलो होय सो श्यावार्म होय है और सुफेद होय सो त्रिदोषज शुक्लार्म कफसे होय है वडो ये होय तौ सुफेदसे अति सुफेद रक्त कमलसो रक्तार्म है स्राववारो संचय होय वढे सो सन्निपातसे हृदयसो नरम मांसार्म होय है ॥ २९५ ॥

स्नाय्वर्मा च त्रिदोष्या स्थिरमिह पृथुलं स्नायुतल्पं यदर्म
द्वित्राश्चेच्छुक्तिसंस्था विदधति पृषताःपित्ततः शुक्तिका स्यात्।
शुक्ले स्याद्बिंदुरेकः शशिरुधिरनिभो रक्तजातोऽर्जुनाख्यः
पिष्टाभं गंधवाहात्प्रसरति सकफाच्चेत्पलं पिष्टकं तत् ॥२९६॥

ये स्नाय्वर्म त्रिदोषी होय है स्थिर मोटो छोटो स्नायुसो शुक्तिमें पित्तसे बिंदु शुक्तिका होय है एक शुक्लबूँद चंद्रमासी लाल सो रक्तसे पैदा अर्जुननामक होय है, वायुसे पिट्टीसो शोभवारो फेले सो कफयुक्त मांससे पिष्टक होय है ॥ २९६ ॥

लूता जालायमानाः स्युरिह यदि शिराः स्याच्छिराजालकोसौ
ताःस्युः सर्वास्त्रिदोष्या लघुलघुपिडिका नामतस्ताःशिराद्याः।
मुक्ताकारो बलासात्प्रभवति पृषतो यः कफग्रंथिकः सः
वर्त्मोत्संगोभिधास्रात्प्रभवति पिडका पूयगंधा सपाका २९७

मकडीके जालेसो नेत्रमें डोरा रक्तसे शिराजाल होता है तामें छोटी २ फुन्सी नामसे शिरादिक त्रिदोषसे होयहैं कफसे मुक्तासमान जो बिंदु होय सो कफग्रंथि है रक्त पाकसे पीव गंधवारी फुन्सी होय वो वर्त्मोत्संगनामक है ॥ २९७ ॥

नेत्रेभ्योप्यश्रुधारा स्रवति यदि दृशा ह्येष पूयालसः स्यात्
कंडूलो ग्रंथिरुच्चैरपगतपवनो भण्यते तूपनाही ।

वारिस्रावोऽश्रुनाडीर्गतवति कुपिते सन्निपाते मलानां
पूयस्रावः स एव स्रवति यदि मुहुः पूयमांसाद्यपाकम् २९८

नेत्रसे दश बूँद पडे तौ पूयालस होय है खुजरी ऊंची गाँठ होय सो वातसे उपनाह कह्यो है, नाडीमें जल प्राप्त होनेसे जलस्राव होय और त्रिदोष मलके कोपसे पीव वहे सो पूयमांसादि पाक है ॥ २९८ ॥

श्लेष्मस्रावस्तु सांद्रं स्रवति यदि ततो रक्तमीषत्कदुष्णं
ताम्रा तन्वी सदाहा प्रभवति पिडका वर्णिकाख्या सपाका।
कृष्णश्वेतांतरासस्रुतिरिह पिडका गोस्तनाभालजी स्यात्
कंडूदाः सूक्ष्मसूक्ष्माः कृमय इह यदा स्युःकृमिग्रंथकः सः२९९

गाढो कफस्राव होय थोडो गरम रक्त वहे तामेसी लाल दाह पाकयुक्त फुन्सी होय सो वर्णिकानामक है काली भीतर सुफेद गौके थनसी फुन्सी वहे सो अलजी होय है, खुजरीदाता छोटी छोटी कृमि होय वो कृमिग्रंथिक होय है ॥ २९९ ॥

वर्त्मोत्संगाभिधास्रात्प्रभवति पिडका वर्त्मनोऽङ्के गुरुर्या
द्वित्रास्ताश्चास्रवंत्यो लघव उरुरुजः कुंभिका स्यात्त्रिदोष्याः।
पोथक्योऽस्रात्स्रवंत्योऽरुणकटुसदृशास्ता अनेकाः सपीडाः
स्थूला सूक्ष्मा शिराभिर्यदि भवति वृता वर्त्मनः शर्करा सा ॥

रक्तसे मोटी फुन्सी होय सो वर्त्मोत्संग होय है त्रिदोषसे दो तीन स्राववारी छोटी फुन्सी होय पीडा देवे सो कुंभिका (गुहेरी) होय है लाल कडवीसी पीडायुक्त अनेक बिंदु स्रवे वो पोथकी होय है मोटी छोटी शिरासे होवे सो वर्त्मशर्करा होय है ॥ ३०० ॥

श्लक्ष्णो ह्यल्पास्थिरूपोऽल्परुगिह पिडकार्शःस्रवद्वाथ शुष्कः
ताम्री तन्वी सदाहा सरुगपि पिडका चांजनी श्लेष्मरक्तात्।
व्याप्तं ताभिः सवर्णाभिरिह बहुलकं वर्त्मनाडी समंतात्
शोथाद्वर्त्माल्पतो नोन्मिषति यदि समं वर्त्मबंधः सकंडूः ३०१

चीकनो हड्डीसो छोटो पीडायुक्त सूखो जो स्रवे सो पिडकार्श है रक्तकफसे तामेसी लाल छोटी दाह पीडायुक्त फुन्सी होय सो

अंजनी है चारों ओर फुन्सीसी दीखे सो वर्त्मनाडी है शोथसे अल्प समान देखे खुजरीयुक्त सो वर्त्मबंध है ॥ ३०१ ॥

ताम्रं मृद्वल्पपीडं सममिह सहसा वर्त्म चेत्क्लिष्टवर्त्मा
पित्तास्रात्कर्दमाभं स्रवदिव परितो वर्त्म चेत्कर्दमः स्यात् ।
बाह्येऽन्तश्चासितं चेज्जनयति पवनो वर्त्मनः श्याववर्त्मा-
थांतः क्लिन्नं बहिः स श्वयथुगतरुजं तत्तु प्रक्लिन्नवर्त्मा ॥३०२॥

ताम्रसी लाल नरम अल्पपीडा समान नेत्र भागमें हो सो क्लिष्टवर्त्मा होय है कीचडसो जलपित्तसे चारों ओर स्रवे सो कर्दमवर्त्मा होय है भीतर बाहर कारो मार्ग होय वो वातसे पैदा श्याववर्त्मा है भीतर बाहर गीलो सूजनयुक्त पीडासहित सो प्रक्लिन्नवर्त्मा है ॥ ३०२ ॥

धौतं वाधौतमेतद्गतमिह तु मुहुर्दह्यते क्लिन्नवर्त्मा
निश्चेष्टं मुक्तसंधीव यदि निमिषति स्यात्समीराहतं तत् ।
वर्त्मान्तर्ग्रंथिले चेद्रुधिरमरु भवेदर्बुदं नाम नीरुक्-
वायुः कुर्यान्निमेषं मुहुरतिलघुरुक् रक्तरागः ससंधिः ॥३०३॥

सुफेद काले भागमें प्राप्त होयके वार २ दाह करे सो क्लिन्नवर्त्मा है चेष्टारहित पलक अच्छे न मिचें वर्त्मके भीतर गाँठ पडे वो वाताहत होयहे रक्तसे पैदा होनेवारो पीडारहित अर्बुदनामक होय है निमेषको थोडी पीडा देवे ये संधिमें होनेवारो रक्तराग है ॥३०३॥

ग्रंथिश्चापाकिनी रुग् न गण इह मतः कोमलश्चालघुश्चे-
दंतश्छिद्रं सबाह्यं श्वयथु च बिसवर्त्म स्रवद्वा बिसाभम् ।
दोषैः संकुच्य वर्त्म प्रसरति न तथा कुंचनं स्यात्तदानीं
पित्तं पक्ष्माणि हन्यात्प्रतुददिव यदा पक्ष्मशातः सकण्डूः ३०४

और जो नेत्रमें विनापकी गाँठ पीडारहित मोटी कठोर होय सो नगण कह्यो है भीतर छेद बाहर शोथ कमलतंतुसो पाक वहे तौ बिसवर्त्म होय है दोषोंसे पलक मिचके उघडे नहीं ताको कुंचन कह्योहे पित्त जो है सो पलकको नाश करे भीतरसे खुजरी दर्द हो सो पक्ष्मशात है ॥ ३०४ ॥

पक्ष्माण्यंतर्विशंति प्रसभमिह मुहुर्वक्रतां प्राप्य वातात्
घृष्टान्यक्षिप्रकोपं दधति यदि गदः पक्ष्मकोपोऽतिकष्टः ।

और वायुके कोपसे पलक जबरदस्ती भीतरसे खिचें और टेढे हो जाय और घिसवेसे नेत्रमें कोप होय ये अतिकष्टदायक पक्ष्मकोप है ।

अथ शिरोरोगावलोकः ॥ ७५ ॥

वातः पीडां विधत्ते निशि शिरसि दिवा पित्तरक्तेऽभितापं
श्लेष्मा भूयो गुरुत्वं त्रितयमपि पुनः सन्निपातः क्षयश्च ३०५

रात्रिको वायुसे माथेमें पीडा होय और दिनमें पित्तरक्त घामसे कफसे भारी रहे सन्निपातसे ये तीनों लक्षण होय और क्षयसे ॥३०५

निस्तोदः कीटरक्तस्रुतिरपि च नसः स्यात्कृमेश्चाथ सूर्या-
वर्ताख्यस्तीव्रदुःखो यदि सह रविणा वर्धते हीयते च ।
वातश्लेष्मान्विताधं व्यथयति शिरसः सोर्धभेदोऽथ पित्तात्
सृग्वाताः शंखदेशे दधति यदि रुजो भूयसीः शंखकः स्यात् ॥

पीडारहित कृमिसे रक्त वहे और नाकमें कीडा काटे ओर अति दुःख देवे सूर्यकी किरण वढेसे वढे घटेसे घटे सो सूर्यावर्तनामक होय हे वातकफसे युक्त जो आधे माथेमें पीडा करे सो अर्धभेदक होय है और पित्तसे रक्तवातसे शंखदेशमें अतिपीडा करे तौ शंखक रोग होय है ॥ ३०६ ॥

यो वातं बंभ्रमीति भ्रकुटिनयनयोः शंखयोर्गंडयोर्वा
मन्यायां भूरि पीडां विदधति ह मुहुः स स्मृतोऽनंतनामा ।

भ्रकुटी और नेत्रोंमें माथेमें गाल मन्यामें जो वायु भ्रमण करे बहुत पीडा देवे सो अनंतनामा रोग है ।

अथ प्रदररोगावलोकः ॥ ७६ ॥

वाताद्या गर्भपातादिभिरतिकुपिता योषितां योनयश्च
रक्तस्रावं स्रवंति प्रदरमिति बुधास्तं जगुस्ते चतुर्धा ॥३०७॥

प्रत्येकं तैः समस्तैरपि रचितपृथूपद्रवैः स्वानुरूपं
रक्तं त्वत्यंतरक्तं शशिजमिह भवेद्गर्भजं ह्यन्यथान्यत् ।

वात आदि वा गर्भपात आदिसे जो स्त्रीकी योनि रक्तस्राव करै तौ याको पण्डित प्रदर कहें ये प्रदर चार प्रकारको है । ३०७ । वात पित्त कफसे सन्निपात कोपसे अपने २ निजरूप पैदा करे अति उपद्रवयुक्त अधिक लाल और सुफेद वहे ये पीडा गर्भसे वा और कारणोंसे होयहै ।

अथ योनिरोगावलोकः ॥ ७७ ॥

वातात्कार्कश्ययुक्ता भवति जवभुजो भूरिदाहा बलासात्
पैच्छिल्याढ्या त्रिलिंगा त्रिभिरपि रुधिराद्दाहकण्डूसमेता ॥

वातसे योनि कठोरतायुक्त होय हे पित्तसे अतिदाहवारी होयहे कफसे चीकनाईयुक्त होयहे सन्निपातसे तीन लक्षणवारी और रक्तसे दाह खुजरीसमेत होय हे ॥ ३०८ ॥

क्षीणा योनिस्तु रक्तात्क्षयजनिरुदिता विप्लुतोपप्लुतांत-
र्मुख्याख्या कर्णिकाख्या पुनरतिचरणोदावृता वामनी च ।
जातघ्नी सूचिवक्त्रा तदनु च चरणा प्राक्पदात्खंडितान्या
पर्यादिस्तु प्लुतान्या प्रभवति च महायोनिशुष्काभिधेया २०९

योनीके रक्त क्षीण होनेसे क्षयसे विप्लुता उपप्लुता कही है और अंतरमुखी नामक होयहे कर्णिका नामक और अतिचरणा उदावृता वामनी और जातघ्नी सूचीवक्त्रा तापीछे अनुचरणा तथा पादखंडिता और खंडिता परिप्लुता और शुष्का नामक होय हैं ॥३०९॥

स्त्रीणां नामानुरूपा इति किल गदिता विंशतिर्योनिरोगा
दोषैर्भिन्नैः समस्तैरपि लकुचनिभो योनिकंदश्चतुर्धा ।

या प्रकार स्त्रीनके नामके अनुरूप योनिके वीस रोग कहे हैं लकुचफलकी नाई वात पित्त कफसे न्यारे २ और सन्निपातसे योनिकंदनामक चार रोग कहे हैं ।

अथ मूढगर्भावलोकः ॥ ७८ ॥

भीतीक्ष्णोष्माभिघातादिभिरभिलभते कामिनी गर्भबाधां
तत्प्राग्रूपं रुगस्रं स्रवति स पृषतैराचतुर्थात्तु मासात् ॥३१०॥

भयसे तीक्ष्ण गरम खानेसे चोट आदिके लगनेसे स्त्रीके गर्भबाधा होय है ताके पूर्वरूपमें दर्दसे रक्त वहै जलबिंदु गिरे यह चौथे माससे ॥ ३१० ॥

षष्ठे वा पंचमे वाप्यतिविषमतरैः कर्मभिर्गर्भपातो
मासेऽश्वे मूढगर्भं रचयति पवनः संचरंस्तत्र मूढः ।
भग्नः स्थानाच्चिरं चेत्कथमपि स तदा योनिवक्रं कराभ्यां
पद्भ्यामंगेन वान्येन च वहुलरुजा तिष्ठदर्धापिधाय ॥३११॥

पाँचवे छठे महीनामेंभी विषमकर्मते गर्भपात होय है सातवे मासमें वातगर्भमें फिरके गर्भको विगार करे सो गूढगर्भ हे और स्थानसें बहुत देरसे निकल्यो बाहर नही निकल सके योनिमुखमें हाथमात्र आवे या पाँवही आवे वा शिरही आवे अति पीडा होय आधो निकले और वैसोही रह जाय ॥ ३११ ॥

कीलस्तब्धांघ्रिपाणिः प्रतिखुर उदितैस्तैः खुरैर्बीजमर्धो-
न्मीलत्पाण्युत्तमांगं परिघ इव परः स्याच्चतुर्धेति मूढः ।
अस्पंदश्यावपांडुः श्वसनबहुलता पूतिता विप्रशांति-
र्गर्भस्योच्छूनतांतर्मरणमुपगते बालके चिह्नमेतत् ॥ ३१२ ॥

हाथ पाँव जकडजाय सो कीलक होयहे जो हाथ पाँव निकल आवें सो प्रतिखुर हे जो हाथ माथो निकल आवे सो वीज हे आधो भीतर आधो बाहर सो परिघ हे ऐसे चार प्रकार मूढगर्भ कहे हैं हिले चले नहीं कालो पीलो अति श्वास ले दुर्गंधि हो अशांति हो गर्भमें शून्यता हो ये बालक गर्भमें मरजाय ताके चिन्ह हैं ॥३१२॥

कंपातीसारतृष्णा ज्वरमसितशिरोच्छूनतांघ्रिश्च शोथः
शैत्यं दाहं कदाचित्कथितमिति बुधैर्गर्भिणीनाशलिंगम् ।

कंप अतीसार प्यास ज्वर काली नस शिर वा पाँवमें शून्यता

और सूजन कभी शीत कभी दाह एसे लक्षण होय तौ गर्भिणी कभी नही वचे एसे पण्डित कहें हैं ।

अथ सूतिकावलोकः ॥ ७९ ॥

मिथ्याचारादिभिः स्यात्कफपवनकृतः सूतिकाव्याधिरुग्रः
शोथश्वासज्वराग्निक्षयबहुलतृषानाहरुकंपरेकैः ॥ ३१३ ॥

मिथ्या आचार आदिसे कफवातसे पैदा सूतिकानामक उग्र रोग होय है सूजन श्वास ज्वर मंदाग्नि और प्यास अफरा कंप अतीसार याके लक्षण हैं ॥ ३१३ ॥

अथ बालरोगावलोकः ॥ ८० ॥

मातृस्तन्यानुरूपो भवति बहुविधो बालरोगोऽथ तत्र
क्षामः शब्दः कृशांगो दृढमपि समलः स्यात्समीरालसाख्यः ।
तृड्दाहस्वेदपीतद्युतिमलशिथिलत्वादिपित्तालसे स्याद्
दुग्धप्रक्षेपनिद्रा ननु गरिमकफाः स्युर्बलासालसेऽपि ॥३१४॥

माताके दूधके अनुसार बहुत तरहके बालरोग होवै हें तहां दुर्बल शब्दवारो कृशांग मलका रुकना वायुके विकार युक्त होनेसे समीरालस नामक रोग होय है प्यास दाह पसीना पीरी कांति मलकी शिथिलता आदि पित्तालसमें होय है दूध और गाढो कफ गेरे निद्रा आवे सो कफालसमेही होय हैं ॥ ३१४ ॥

शूलाध्मानाविधर्मादिभिरपि च तथा दृग्निपातैः खलस्य
डिंभो रोदित्यकस्मादिह मतिचतुरेणेंगितैरूहनीयम् ।
दाहो ह्यक्ष्णोः कुकूणः प्रभवति जननीगर्भदोषात्प्रसह्य
श्लेष्माद्यस्तालुमांसौ विरचयतिशिशोः पारिगर्भः सतापौ३१५

शूल अफरा पसीना आदिकरके दुष्टकी दृष्टि पातसे अकस्मात् रोवे बालक तो बुद्धिमानोंनें विचारनो चाहिये माताके गर्भदोषसे नेत्रपलकमें बलात्कारसे पीडा होय सो कुकूणक है कफसे पैदा तालुकंटक मांसमें पीडा देनेवारो ज्वरयुक्त पारिगर्भ होय है ३१५

बस्तौ वा मूर्ध्नि भूत्वा सरसिरुहनिभश्चेद्विसर्पो विसर्प-
न्स्यादस्मिन्वर्षभागे प्रभवति स महापद्मनामा शिशूनाम् ।

स्निग्धा नीरुक् सवर्णोदयति च पिडका मुद्गतुल्याऽजगल्ली-
पूर्वोक्तास्ते ज्वराद्या अपि शिशुवपुषि स्युः प्रसूदुग्धदोषैः ३१६

मूत्राशय वा माथेमें होके फेले कमलपुष्पके समान सो पद्म-विसर्प होय है दो वर्षके हिस्सेमें बालकोंके महापद्मनामा रोग होवे है चीकनी पीडारहित मूँगके समान फुन्सी होय सो अज-गल्ली है मताके दूधदोषसे पहलें कहे ज्वरादिकभी बालकके अंगमें होवे हैं ॥ ३१६ ॥

यो दंतान्खादतीह क्षिपति करपदं भ्रूकुटिं वीक्षते च
क्षामो जागर्ति रोदित्यपि कपिशरुचिः स्याद्ग्रहग्रस्त एषः ।
नेत्रेणाऽर्धेन पश्यद्विसृजति च पयो लोचनादेकतोऽसृग्
गंधस्तन्यं पिबेन्नो स किल कवलितः स्कंदनाम्ना ग्रहेण ३१७

जो दाँतको कटकटावे हाथ पाँवको पटके भ्रुकुटीको देखे दुर्बल कम सोवे रोवे काली पीली आकृति हो सो ग्रहग्रस्तलक्षण होय हे और आधे नेत्रसे देखे दूध गेरे एक नेत्रसे रक्त गिरे गंधसे दूध न पिये एसे लक्षणसे युक्त जो बालक हे सो स्कंद-नामा ग्रहपीडित होय है ॥ ३१७ ॥

स्कंदापस्मारजुष्टो भवति गतमतिर्जातसंज्ञश्च रोदि-
त्युच्चैः पूयास्रगंधो वमति च बहुलं फेनिलं वारि बालः ।
स्रस्तांगः पक्षिगंधश्चकित इव मुहुः स्फोटपूर्णः सदाहः
स्रंसद्वक्षाः सपीडो यदि भवति शिशुः स्याच्छकुन्या गृहीतः ॥

बुद्धिभ्रष्ट होय और होसमें आवे तब रोवे सो स्कंदापस्मारयुक्त हे और जोरसे पीव रक्तकी गंध आवे ऐसी अतिजलयुक्त उलटी करे अंग शिथिल हो जाय पक्षीकीसी गंध आवे चकित होरहे फुन्सीयुक्त छाती गिरीसी मालूम पडे दाहपीडायुक्त दिनमें पीडाविशेप हो तो वह बालक शकुनीगृहीत होय हे ॥ ३१८ ॥

यद्गात्रं शादगंधि व्रणगलदसृजा भिन्नवर्चो ज्वरार्तो
दाहादैन्याच्च खिन्नः स इह निगदितो रेवतीगीर्णगात्रः ।

तृष्णातीसारयुक्तः क्षणरुदितनिशाजागरैः पूतनार्त्तो
बालोन्धः पूतनार्त्तोऽपि च भवति तृषा पूति वै रोदनश्च ३१९

जाके अंगमें कीचकी गंध आवे व्रण गले भये नमेसे रक्त वहे कांतिरहित ज्वरपीडित दाह दीनतासे खिन्न सो बालक रेवतीग्रहसे दुःखित कह्यो हे प्यास अतीसार टेढो देखे, रात्रिमें सोवे नही रोवे सो पूतनापीडित है तृषा दुर्गंधि रोनेकर युक्त जो बालक हे सो अंधपूतनाकर युक्त होयहे ॥ ३१९ ॥

कंपातीसारकासैरपि नयनरुजा शीतनापीडितः स्या-
द्बह्वाशी वीर्यवक्रो विकृतिबहुशिरोवक्रमुंडप्रपातः ।
मूर्च्छाकंपास्यशोषी सवमिरुपरिदृङ् नैगमेषादथ स्यु-
र्दतोद्भेदादिलालास्रुतिगुदपरिपाकापशीर्षादयोऽन्ये ॥३२०॥

कंप अतीसार कास और नेत्र दर्दयुक्त शीतपूतनापीडित होय है बहुत भोजन करे वीर्यमें और मुखमें विकृति बहुनशें टेडी, और मुखटेडो हो सो मुख मुंडितका पडनेसे होयहै मूर्च्छा कंप मुख शोषवाला वमनयुक्त ऊपर दृष्टि नेगमेष ग्रहपीडित होय है दंतके निकरवेमें लार गिरे गुदापाक माथेमें पीडा होयहे ॥ ३२० ॥

अथ विषरोगावलोकः ॥ ८१ ॥

द्वेधा प्रोक्तं भिषग्भिर्विषमतिविषमं स्थावरं जंगमं चा-
द्यं मौलञ्च सार्पं ह्यपरमथ वदेल्लक्षणैराद्यमेतैः ।
हिक्काकंपावरोधज्वरकफवमना, रोचकश्वासमूर्च्छो-
घर्षातिभ्रांतिनेत्रात्यरुणिमदशनद्वारदाहप्रसेकैः ॥ ३२१ ॥

विष अति विष वैद्योंनें दो प्रकारको स्थावर जंगम कह्यो है सर्प आदिके माथेमें इनके प्रथमको लक्षण कहनो हिचकी कंप अवरोध ज्वर कफ वमन अरुचि श्वास मूर्च्छा अतिभ्रांति नेत्र अति लाल मद सो (मुखादि) द्वारोंमें दाह पसीना ॥ ३२१ ॥

सार्पं तु श्वासशोथक्लमदवथुतमोदंशवैवर्ण्यसेका-
तीसारास्याक्षिरागभ्रमसहितशिरोदाहजिह्वातिमौढ्यैः ।

मौलादुद्वेष्टनं स्याद्वपुषि दलविषाज्जृंभणं पुष्पजाता-
च्छर्दिः शोथोण्डयोः स्यात्फलविषत इह त्वग्विषादंगरौक्ष्यम्

श्वास शोथ ग्लानि वमन अंधेरो पसीना विवर्णता सर्पदंशसे अतीसार मुखनेत्रमोह भौंर और शिरमें दाह जिह्वामें अतिमूढता होयहे जड विषसे अंगबंधन होय है पत्रविषसे जंभाई पुष्पजात विषसे उल्टी अंडशोथ होय है फलविषसे वमन दोनो आँडोंमें शोथ छाल विषसे अंग रूखो होवे है ॥ ३२२ ॥

सारोत्थादास्यपूतित्वमथ कफवमिः स्याच्च निर्यासजाता-
द्रेकः स्याद्दुग्धजातादथ हृदयरुजा धातुजाता चिरघ्नी ।
श्यामः स्याद्भोगिदंशः समरुदतिकफं राजिलश्चंद्रचारुः
संरुंधे सोऽतिपित्तं नवकनकनिभं मंडली तं तनोति ॥३२३॥

सारज विषसे मुखमें दुर्गंधि और गोदज विपसे कफ वमन होय है दुग्धज विषसे दस्त और हृदयरोग होवे धातुविषसे पैदा विषसे शीघ्र नाश होवे भोगीको दंशकारो होय है अतिवात युक्त कफ करे राजिलको (दंश)चंद्रसो सुफेद होवे अति पित्त रोके नयो स्वर्ण सो मंडलीकको दंश होय हे ॥ ३२३ ॥

रोमांचो यस्य न स्यादतिशिशिरजलैर्यस्तु दष्टः श्मशाने
वल्मीके लेख्यगेहे यमदिशि वसतेः संध्ययोर्मर्मदेशे ।
कुक्षौ वा मूर्ध्नि यो वा स्खलिततमवचाः सप्रसेकः सकंठ-
घ्राणध्वंसो हि दष्टो व्रजति यमपुरं कूर्मवद्यस्य दंशात् ३२४

श्मशानमें शीतल जलमें काटे रोमांच खडे होय बाँबीमें शून्य गृह दक्षिणदिशामें दो संधियोंमें मर्ममें कूखमें माथेमें काटे तौ पसीना होय टूटे वचनोंको कहे और घ्राणनाश होय एसो काट्यो कछु-वाको दंश जाके सो यमपुरीको जाय ॥ ३२४ ॥

भेदः सूचीभिरंगेष्विव भवति महामोहदाहातिपीडा
विड्भंगे वृश्चिकेन ज्वलदनल इव श्यामलः स्याद्धि शोथः ।
लूतामूत्रादिजातं विषमनलविसर्पोपमं मूषकोत्थं
सर्वाङ्गे पिप्पलीवद्व्रण इव सरति च्छर्दिवैवर्ण्यकारि ॥३२५॥

अंगमें सूईसी चुभनो होय महामोह दाह अतिपीडा मलनाश अतिजलनसी काली सूजन विच्छूके काटेसे होयहे मकरीके मूत्र आदिसे पैदा विष पित्तविसर्प सो होयहे मूषेको विष सब अंगमें चेटियोंका समूह सारेगें वमन विवर्णता करे ॥ ३२५ ॥

मांडूकाच्छर्दिनिद्रे तृडथ शतपदीदंशतः शोथपीडा
दाहं दूषीविषात्तु ह्यथ वमथुतृडानाहकेशप्रणाशाः ।
अन्यत्संयोगजातं विषमिह गदितं प्रस्फुटं स्थावरान्त-
र्भूतत्वात्तत्तु बुद्ध्या घृतमधुशशिनिंबादि विज्ञेयमुच्चैः ॥३२६॥

मेडकाके विषसे वमन निद्रा प्यास और काँतरके दंशते शूजन-पीडा दूधीविपसे दाह और वमन प्यास उदर अफरा केशोंका नाश फुसकारी (दीवड)से स्थावर बहुत दिनको घी मधु पय निम्बादि येभी महाविष होजाय हैं एसा प्रकट कहाहे ॥ ३२६ ॥

अथ ग्रन्थोक्तरोगसंख्यावलोकः ॥ ८२ ॥

एषा श्रीमाधवोक्तक्रमत इह मया भट्टत्रैमल्लनाम्ना
छंदोभिः स्कंदवक्रस्वरनयनमितैः स्रग्धराख्यैरवाचि ।
एतज्जन्येन पुण्येन तु भवतु भवः श्रीभवान्याभिजुष्ट-
स्तुष्टस्त्रैलोक्यसर्गस्थितिलयघटनाव्यग्रदृक्कोणपातः ॥३२७

ये मे त्रिमल्लभट्ट नामाने माधवनिदानके क्रमसे तीनसो छव्वीस स्रग्धरा छंदोंकरके कह्यो यासे पैदा पुण्यसे जगतको पैदा पालन-संहारकी घटनामे चंचल हे नेत्रकोणको पात जिनको एसे श्रीपा-र्वतीकर सेवित महादेव प्रसन्न होय ॥ ३२७ ॥

देवप्रणामो ग्रंथस्य प्रयोजनमथो नतिः ।
विदां दुष्टमुखच्छेदो दूतलक्षणशाकुने ॥ ३२८ ॥

देवताको प्रणाम ग्रंथप्रयोजन विद्वानसे नम्रता दुष्टमुख छेदन दूतलक्षण और शकुनमें ॥ ३२८ ॥

शारीरं काललोकश्च मूत्रांकं मललक्षणम् ।
नेत्रांकं नाडिकाज्ञानमसाध्यस्वरवर्णकम् ॥ ३२९ ॥

शरीर और काल ज्ञान देखनो मूत्र मललक्षण नेत्रलक्षण नाडीज्ञान असाध्यलक्षण स्वरवर्णविचार ॥ ३२९ ॥

याप्यसाध्यौ च दोषाणां निदानं लक्षणं ततः ।
निदानपंचकं तापातीसारग्रहणीगदाः ॥ ३३० ॥

याप्यसाध्य दोषनिदान निदानपंचक ज्वर और अतीसार संग्रहणी रोग ॥ ३३० ॥

अर्शोऽग्निरुगजीर्णान्यलसोऽन्यो दण्डसंयुतः ।
विलंबी सूचिकाजंतुपाण्डुरोगांश्च कामला ॥ ३३१ ॥

बवासीर अग्निरोग अजीर्ण अलसक दूसरा दण्डालसक विलंबी विपूचिका कृमि पांडुरोग और कामला ॥ ३३१ ॥

कुंभाद्या सैव क्रमतोऽथो हलीमकपानकी ।
रक्तपित्तं राजयक्ष्मा कासहिक्कासश्वासकम् ॥ ३३२ ॥

कुंभादिकसो एसे क्रमसे हलीमक पानकी रक्तपित्त राजयक्ष्मा कास हिचकी श्वासयुक्त ॥ ३३२ ॥

स्वरभेदो हि रोगश्चारोचकच्छर्दितृड्गदाः ।
मूर्च्छा च पानरोगाश्च अजीर्णात्ययसंज्ञकः ॥ ३३३ ॥

स्वरभेद रोग और अरुचि वमनप्यासरोग मूर्च्छा और पानरोग और अजीर्णात्ययसंज्ञक ॥ ३३३ ॥

दाहोन्मादा ग्रहोन्मादापस्मारत्रिमलामलाः ।
रक्तरुग्वातरक्तोरुस्तंभश्चामानिलव्यथाः ॥ ३३४ ॥

दाह उन्माद ग्रहोन्माद अपस्मार त्रिदोपरोग रक्तरोग वातरक्त ऊरुस्तंभ आम और वातव्याधि ॥ ३३४ ॥

शूलपंक्त्यर्तिकेऽन्नाद्यं द्रवं पित्तं जरन्मितम् ।
उदावर्त्तस्तथानाहो गुल्महृद्रोगकृच्छ्रकम् ॥ ३३५ ॥

शूल पंक्तिशूल अन्नद्रव शूल आदि जरत्पित्त उदावर्त तथा अफरा गुल्म हृद्रोग मूत्रकृच्छ्र ॥ ३३५ ॥

मूत्राघातोऽश्मरी मेहं मध्वाक्षो पिडकास्तथा ।
मेदोदोषोदरं शोथं व्रणशोथो व्रणोद्भवः ॥ ३३६ ॥

मूत्राघात अश्मरी प्रमेह मधुमेह पिडका तथा मेददोष उदरशोथ व्रणसे पैदा व्रणशोथ ॥ ३३६ ॥

भगंदरगलव्याधिगंडमालाऽपची ततः ।
ग्रंथ्यर्बुदे विद्रधिश्च उपदंशश्च शूकरुक् ॥ ३३७ ॥

भगंदर गलरोग गंडमाला अपची ग्रंथ्यर्बुद विद्रधि और उपदंश तथा शूकरोग ॥ ३३७ ॥

कुष्टोदर्द शीतपित्तमम्लपित्तविसर्पता ।
विस्फोटाश्च मसूर्यश्च क्षुद्ररोगास्यकर्णजाः ॥ ३३८ ॥

कुष्ट उदर्द शीतपित्त अम्लपित्त विसर्प विस्फोट और मसूर्या और क्षुद्ररोग मुखरोग कर्णसे पैदा रोग ॥ ३३८ ॥

नासानेत्रशिरोरोगाः प्रदरो योनिजा गदाः ।
मूढगर्भप्रसूती च शिशुजा हि विषामयाः ॥ ३३९ ॥

नासारोग नेत्ररोग शिरोरोग प्रदररोग योनिरोग मूढगर्भप्रसूतरोग और बालरोग विषरोग ॥ ३३९ ॥

नेत्राशीत्यवलोकाढ्यो ज्वराद्यश्च विषांतकम् ।
कृतं त्रिमल्लभट्टेन निदानं वैद्यहेतवे ॥ ३४० ॥

इति श्री–वैद्यचंद्रोदयः–

कविवरत्रिमल्लभट्टविरचितः समाप्तः ।

व्यासी अवलोकोमें ज्वरसे आदिलेके विषरोगपर्यंत निदान वैद्योंके हितार्थ त्रिमल्लभट्टने कह्यो हे ॥ ३४० ॥

श्रीमत्कल्याणचन्द्रो निखिलगुणनिधिर्माथुराणामधीश-
स्तत्पुत्रोऽहं हि वैद्यो मधुपुरनिलयो राधिकाचंद्रनामा ।
भाषाटीकां मनोज्ञामनुमतिकृतवान्वैद्यचंद्रोदयस्य
षष्ठ्यां वै सौम्यवारे द्व्यरसनवभूवत्सरे पौषशुक्ले ॥ १ ॥

इति श्री–वैद्यचन्द्रोदयस्य

बडे चौबे श्री राधाचंद्रजी वैद्य कवि-
विरचिता भाषाटीका समाप्ता ।

। समाप्तोयं ग्रन्थः ।
